भारतीय साहित्य कोश

(खण्ड-1)

मीमांसक एवं संपादक

डॉ. सुरेश गौतम

रीडर, एसो. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
सत्यवती कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय,
अशोक विहार-III, दिल्ली

सहायक संपादक

डॉ. वीणा गौतम

रीडर, एसो. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
लक्ष्मीबाई कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय,
अशोक विहार-III, दिल्ली

संजय प्रकाशन

दिल्ली (भारत)

इन कोश ग्रंथों का कोई भी भाग किसी भी रूप में या किसी भी अर्थ में संपादक / लेखक की अनुमति के बिना प्रकाशित नहीं किया जा सकता / सर्वाधिकार संपादक के अधीन है।

प्रकाशक : **संजय प्रकाशन**
4378/4 बी, 209, जे.एम.डी. हाउस, गली मुरारी लाल,
अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002
दूरभाष : (का.) 23245808, 41564415
मो. : 9313438740
प्रथम संस्करण : 2008
सर्वाधिकार © : संपादक
आई एस बी एन 81-7453-279-X
मूल्य : प्रत्येक खंड पच्चीस सौ रुपए मात्र
संपूर्ण खंड सात हजार पाँच सौ रुपए मात्र
शब्द संयोजन : हर्ष कम्प्यूटर
म.नं. 70, गली नं. 3, त्यागी मार्केट
मंडोली, दिल्ली
मुद्रक : रोशन ऑफसेट प्रिंटर्स
दिल्ली-110053

BHARTIYA SAHITYA KOSH (Vol-I) *by* Dr. Suresh Gautam
Vol. I, II, III Set Price : 7500.00

डॉ. सु.म. तडकोडकर
मराठी विभाग, गोवा विश्वविद्यालय, गोवा,
डॉ. रवीन्द्रनाथ मिश्र
हिन्दी विभाग, गोवा विश्वविद्यालय, गोवा

कोंकणी (समकालीन)

जब अधिकांश भारतीय भाषाओं का साहित्य विविध आंदोलनों से गुजरते हुए समकालीनता के दौर में प्रवेश कर रहा था तब भारत के पश्चिमांचल में स्थित गोवा प्रदेश पुर्तगाली शासन के तले पराधीनता की पीड़ा से कराह रहा था। दरअसल, गोवा-मुक्ति आंदोलन का अपना एक अलग इतिहास है, जिसका उल्लेख करना यहाँ समीचीन नहीं होगा। यहाँ मैं इतना ही कहना चाहूँगा कि गोवा को भारत की आजादी के चौदह वर्षों के बाद 29 दिसम्बर, 1961 को मुक्ति मिली। गोवा मुक्ति के पूर्व यहाँ कोंकणी साहित्य की समृद्ध परंपरा विद्यमान थी, लेकिन पुर्तगालियों ने कोंकणी के अस्तित्व को समाप्त कर पोर्तुगीज भाषा को स्थापित करने पर बल दिया। फलतः कोंकणी भाषा, साहित्य और संस्कृति का समुचित विकास नहीं हो सका। कालान्तर में कोंकणी को धर्म-प्रचार का माध्यम बनाकर पुर्तगालियों ने इसके प्रयोग की अनुमति दी। इससे कोंकणी की थोड़ी प्रगति हुई। इसके अतिरिक्त यहाँ मराठी का विशेष प्रभाव होने के कारण भी कोंकणी को अपना अस्तित्व कायम करने में काफी मशक्कत करनी पड़ी। 13-14वीं शताब्दी से आदिलशाही शासनकाल में स्थित कन्नड़, उर्दू, फारसी भाषाओं को दूर रखने के प्रयत्न में यहाँ के समाज को साहित्य और संस्कृति की भाषा के रूप में मराठी को स्वीकार करना पड़ा। गोवा मुक्ति के बाद भी अंग्रेजी भाषा और संस्कृति से बचने के लिए सभी मांगलिक कार्य, भजन-कीर्तन एवं धार्मिक विधि-विधान संस्कृत एवं मराठी भाषा में होने लगे। आज भी परंपरागत रूप से उसी भाषा में जारी हैं। महाराष्ट्र की सीमा से लगे हुए उत्तर गोवा के लोग पहले कोंकणी मिश्रित मराठी का प्रयोग बोलचाल की भाषा के रूप में करते थे, जिसका प्रभाव आज भी है। वस्तुतः इस सच्चाई को ध्यान में रखते हुए आधुनिक कोंकणी भाषा के जनक वामन रघुनाथ वर्दे बालावलिकार उपनाम शणै गोंयबाब ने पहले ही इस बात की घोषणा कर दी कि कोंकणी मराठी की बोली नहीं अपितु एक स्वतंत्र भाषा है। उन्होंने कोंकणी समाज में अपनी भाषा के प्रति एक प्रकार का जनजागरण चलाया।

शणै गोंयबाब ने कोंकणी भाषा का इतिहास, व्याकरण, कथा, नाटक, शोध-प्रबंध आदि देवनागरी एवं रोमन लिपि में लिखकर हिंदू-ईसाई समाज के विचारकों, चिंतकों और साहित्यकारों को संघटित किया। फलतः कोंकणी भाषा को लोक-मान्यता मिली। कालान्तर में कोंकणी को राजभाषा की मान्यता मिली। दरअसल, गोवा मुक्ति के पूर्व कोंकणी भाषा की जड़ें यहाँ की माटी में मुरझाई हुई दूब की भाँति पड़ी थीं,

जो कि तत्कालीन कोंकणी रचनाकारों द्वारा सर्जन की ऊष्मा, जल एवं शीतल वायु के द्वारा सिंचित होती रहीं। मुक्ति के उपरान्त उसे फलने-फूलने का उर्वर वातावरण प्राप्त हुआ। कोंकणी आधुनिक जीवन को अपने में समा लेने की कोशिश करने लगी। दुःखद पक्ष यह रहा कि मराठी से इसकी अनबन बरकरार रही लेकिन यहाँ हिंदी भाषा को लेकर कभी कोई विरोध नहीं रहा। यहाँ के लोगों ने हिंदी को राष्ट्रीय अस्मिता से जोड़कर देखा। यहाँ की माटी की भाषा होने के कारण कोंकणी को जनता, सरकार तथा अन्य भाषा-भाषी विद्वानों का पूर्ण समर्थन प्राप्त हुआ।

कोंकणी भाषा और साहित्य की वास्तविक प्रगति गोवा मुक्ति के उपरान्त ही हुई। सम्प्रति वह विकास की प्रक्रिया में निरन्तर गतिशील है। इसके विकास हेतु कोंकणी भाषा मंडल, अस्मिताएँ प्रतिष्ठान, गोवा कला अकादमी, इंस्टिट्यूट मिनेझिस ब्रागांझा, तॉमास स्टीफन्स केन्द्र पर्वरी, गोवा विश्वविद्यालय में स्थित कोंकणी अध्ययन एवं अध्यापन विभाग, गोवा कोंकणी अकादमी आदि अनेक संस्थाओं की स्थापना की गई। परिणामस्वरूप आज कोंकणी की विभिन्न विधाओं में लेखन का कार्य सम्पन्न हो रहा है। गोवा के हिंदू-ईसाई समाज में कोंकणी भाषा क्रमशः देवनागरी और रोमन लिपि में तथा गोवा के सीमान्त से जुड़े कर्नाटक और केरल प्रान्त में कन्नड़ और मलयालम लिपि में लिखी- पढ़ी जा रही है। साहित्य अकादमी ने इसे सन् 1975 में तथा भारत सरकार ने 1987 में राजभाषा की मान्यता प्रदान की। कोंकणी को संविधान की आठवीं अनुसूची में 1992 में सम्मिलित किया गया।

काव्य-लेखन

कोंकणी साहित्य में अन्य भाषाओं की भाँति काव्य-लेखन की विपुल एवं सुदीर्घ परंपरा रही है। गोवा में पुर्तगालियों के आगमन के पूर्व 14वीं सदी में नामदेव ने कोंकणी में काव्य-रचना की। कृष्णभट्ट बांदकार ने भी कोंकणी में स्फुट काव्य-रचना का कार्य किया। 16वीं सदी में गाश्पार-द-सा मिगेल ने यीशु के वधस्तंभारोहण पर करुण काव्य का लेखन किया था। 13वीं सदी में यीशुमाता मैरी के आक्रंदन पर आधारित लातिन भाषा में लिखे हुए काव्य का 17वीं सदी में फादर पाश्कोल डायस ने कोंकणी में अनुवाद किया था। काशीनाथ श्रीधर नायक उपनाम 'बयाभाव' (1899-1983) ने 'सड्यावेलीं फूलाँ' (घाटमाथे पर खिले हुए पुष्प) एवं 'सुकृत फळाँ'(सुकर्मों का फल) दो कविता-संग्रहों की रचना की। इनकी कविताओं में मूलतः प्रकृति, कोंकण प्रदेश एवं मानव-सम्बंधों का चित्रण हुआ है। आदेवुदातु बारेंतु ने भी संगीतमय 'पायजणां' (नूपुर) के माध्यम से काव्य-रसिकों हेतु अनुपम रचना की है। कालान्तर में भारत सरकार ने उन्हें 'पद्मश्री' पुरस्कार से सम्मानित किया। बोरकार की 'सासाय' (1980) परमेश्वर का अस्तित्व काव्य-संग्रह कुछ हद तक अंतर्मुखी रचना है। उनकी 'वासवदत्ता', 'पैगम्बर', 'भजगोविन्दम्' (1973) आदि रचनाएँ प्रशंसनीय हैं। रामचन्द्र नारायण नायक (1901-1982) ने यीशु का गिरि प्रदेश में दिया हुआ संदेश, रवीन्द्रनाथ टैगोर की 'गीताजंलि' एवं अंग्रेजी 'स्ट्रेबड्र्स' जैसे काव्यों का अनुवाद किया। ये सभी स्वभावतः छायावादी कवि थे।

लोककवि मनोहरराय लक्ष्मणराव सरदेसाय (1923) ने आधुनिक कोंकणी कविता की नींव रखी। आपका 'आयज रे धोलार पडली बडी' (आज बज उठा ढोल-61) काव्य-संग्रह ने गोवा के सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन को एक नई चेतना प्रदान की। सरदेसाय जी कोंकणी कविता को एक नई जमीन दे ही रहे थे कि उन्हें किसी कार्यवश पेरिस जाना पड़ गया। वहाँ पहुँचकर इनके मन में देशप्रेम की भावना उमड़ पड़ी। उस समय की लिखी हुई सम्पूर्ण कविताएँ 'गोंवा तुज्या मोगा खातिर' (गोवा तुम्हारे वात्सल्य के

कारण) काव्य-संग्रह में संगृहीत हैं। इन दो काव्य-संग्रहों ने मात्र कोंकणी भक्तों को ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण गोवा समाजवादियों को नई दृष्टि प्रदान की। आपके 'जायात जागे' (64) यानी 'जाग्रत हो' काव्य-संग्रह की कविताओं में दलितों और पीड़ितों के मानसिक आत्मोद्धार, भावी कोंकण समाज का स्वरूप एवं संरचना, गोवा मुक्ति की कामना की आशातीत सफलता, स्वार्थी प्रवृत्ति के लोगों का उदय, बहुजन हित की अपेक्षा स्वहित की संकीर्ण भावना, विधानसभा की कार्रवाई के उपहासात्मक स्वरूप आदि समसामयिक स्वरूपों एवं समस्याओं की चर्चा की गई है। आपको साहित्य अकादमी के अतिरिक्त कई अन्य पुरस्कारों से भी सम्मानित किया गया है। कालान्तर में सरदेसाय जी ने 'हुंदराची सभा' (चूहों की सभा) नामक विडंबनात्मक काव्य-लेखन का आदर्श प्रस्तुत किया। कुछ समय बाद इनके 'जायो जुंयो' और 'पिशोळी' (78) काव्य-संग्रहों ने क्रमशः नवीन सुंदरता का उद्घोष करते हुए सहज, शांत एवं स्निग्ध स्वरूप की कविता प्रदान की। काव्य-लेखन को नया मोड़ देते हुए इन्होंने बाल-साहित्य का भी सर्जन किया तथा 'भांगराची कुराड' (सुवर्ण की कुल्हाड़ी) और 'खुरसाची काणी' (क्रास की कहानी) जैसे प्रसिद्ध कथा काव्य-संग्रहों की रचना की। इनकी कविताओं के अनुवाद अन्य भारतीय भाषाओं के साहित्य में भी हुए हैं। आपके जीवन पर वृत्तचित्र भी तैयार किया गया है। आज भी आप कोंकणी कविता के लेखन में उसी तत्परता से संलग्न हैं। आपकी कविताएँ यहाँ की कोंकणी पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती हैं। देसाय जी कई भाषाओं के जानकार हैं। आप गोवा विश्वविद्यालय के फ्रेंच विभाग में प्रो. एवं अध्यक्ष के पद पर कई वर्षों तक कार्य करते हुए यहीं से सेवामुक्त हुए। सम्प्रति स्वंतत्र लेखन-कार्य में निरत हैं। गोवा में मनोहरराय सरदेसाय को कोंकणी कविता का सिरमौर कहा जाता है।

जिस समय सरदेसाय की कोंकणी कविता की धूम मची थी, उस समय गोवा के पीड़ित कृषक समाज की वेदना एवं पीड़ा के स्वर को र.वि. पंडित (1917-90) ने अपनी कविताओं के माध्यम से मुखरित किया। उन्होंने कोंकणी कविता को एक नया आयाम दिया। पंडित जी ने धनवान् 'भाटकार' (भूपति) होते हुए भी भूमिहीन किसानों की दीन-हीन एवं दारिद्र्यपूर्ण जीवनदशा का बड़ा मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया। उनके 'म्हजे उतर गावड्याचें', 'उतरलें तें रूप धरलें', 'धतरेचें कवन', 'चन्द्रावल', 'आयलें तशें गायलें', आदि एक साथ जब पाँच काव्य-संग्रह 26 जनवरी, 1963 में प्रकाशित हुए तब लोग उनकी काव्य-प्रतिभा को देखकर आश्चर्यचकित रह गए। ऐसा लगा कि एक 'भाटकार' असहाय निर्जनों का श्वास बनकर जी रहा है। महाराष्ट्र में गोवा के विलय की समस्या को लेकर जो जन-आंदोलन शुरू हुआ था, उसमें पंडितजी ने अखण्ड गोवा राज्य का समर्थन करते हुए लोगों से धन एकत्र किया और साथ ही आंदोलन के खर्च के लिए अपनी जमीन तक बेंच डाली। पंडितजी के इस त्याग को काफी सराहा गया। कालान्तर में इन्हें 'पद्मश्री' के पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। 1969, 75, 77 में इनके क्रमशः 'रेवेंतली पावलां', 'मोंगाचें आंवंडे', 'दर्या गाजोता' तीन काव्य-संग्रह प्रकाशित हुए। पंडितजी की कविताओं का अनुवाद भारतीय एवं अन्य भरतीयेतर भाषाओं में हुआ। इसके साथ ही आपकी रचनाओं पर शोधकार्य भी हुए हैं। आपको 'कॉमनवेल्थ नेशन्स' का पुरस्कार भी प्राप्त हुआ है।

कोंकणी काव्य जगत् में पंडितजी का आगमन समुद्र की तेज लहरों के समान आया और बाद में उसकी धीमी लहरों का शांत विवर्तन वर्तमान कवियों पर भी पड़ा। उनमें वामन सरदेसाय उपनाम अभिजित (1923-1994) का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन्होंने जीवन-विषयक दर्शन पर कविताएँ लिखीं। स्वभावतः ये सरल एवं सीधे थे, लेकिन आपकी रचनाएँ अनमोल थीं। कालान्तर में अभिजीत को

'पद्मश्री' की उपाधि से विभूषित किया गया। समाजवाद और छायावाद के सम्मिश्रण के दर्शन को लेकर गजानन रायकर का 'बनवड' और 'सुंवारी' दो काव्य-संग्रह आए। इनमें जहाँ एक ओर आनंदभाव का प्रभाव दिखाई देता है वहीं दूसरी ओर समाजवाद का घोष एवं तीसरी ओर प्राकृतिक सौन्दर्य तथा चौथी ओर कोंकणी शब्दों का सुरम्य प्रयोग मिलता है। रायकर की कविताओं में एक अजीब-सी ध्वनि और नाद विद्यमान है। इनमें एक अजीब-सी बात यह है कि ये कभी कोंकणी में लिखते हैं तो कभी मराठी में। रायकर की वाणी में अद्भुत क्षमता विद्यमान है, जो श्रोता को अभिभूत कर लेती है। इन जैसी काव्य-गायन की अद्भुत प्रतिभा शायद ही किसी कवि में होगी। अंग्रेजी में इसे 'डिवाइडेड पर्सनैलिटी' की संज्ञा दी जाती है।

र.वि. पंडित की कोंकणी काव्य-परंपरा की अगली कड़ी में नागेश करमली का नाम आता है। इनकी कविताओं का रसास्वादन काव्य-रसिकों ने 1965 से ही लेना शुरू कर दिया था, लेकिन स्वभावतः आलस्य के कारण इन्होंने अपनी कविताओं के प्रकाशन की ओर ध्यान नहीं दिया। आगे चलकर 1979 में इनके 'जोरगत' और 'सांवार' नामक दो काव्य-संग्रह प्रकाशित हुए। नागेशजी की सामाजिक एवं राजनीतिक विचारधारा की कविताएँ पाठकों और श्रोताओं को अंदर से झंकृत कर देती हैं। इनके 'वंशकुकचें देणें' काव्य-संग्रह के प्रकाशन से मानो शक्ति का लावा फूट पड़ा, जिसमें समाजवाद और सांस्कृतिक परंपरा का सुन्दर समन्वय दृष्टिगोचर होता है। सन् 2003 में प्रकाशित आपके 'थांग-अथांग' काव्य-संग्रह की कविताओं में जीवन-विषयक धारणाओं, मान्यताओं एवं परंपराओं को देखा जा सकता है। साहित्य अकादमी से सम्मानित करमली जी ने गोवा मुक्ति आंदोलन में एक स्वतंत्रता सेनानी के रूप में अहम भूमिका का निर्वाह करते हुए जेल की सजा काटी। समाज और राजनीतिक जीवन से गहरे रूप में जुड़े करमली की रचनाओं में जो साम्यवादी विचारधारा की आग है, वह अन्यत्र कवियों में नहीं दिखाई देती। झूठ-फरेब और दिखावटी दुनिया से दूर, साधारण जीवन जीने वाले करमली जी आज भी सामाजिक-सांस्कृतिक एवं साहित्यिक कार्यों में सक्रिय भूमिका का निर्वाह कर रहे हैं।

पाण्डुरंग भांगी (1923) ने कोंकणी कविता को दार्शनिक आयाम दिया। आत्म-परीक्षणात्मकता, सूक्ष्मता एवं गूढ़ार्थ चिंतन इनकी कविता की विशिष्टता मानी जाती है। मानव जीवन के परिवर्तित भावों और विचारों की सूक्ष्म पकड़ को इनकी कविताओं में देखा जा सकता है। 1982 में प्रकाशित 'दिस्टावो' (दर्शन) और 'अदृष्टाचे कळे' (अदृश्य भागधेय की कलियाँ) काव्य-संग्रहों पर इन्हें साहित्य अकादमी के पुरस्कार से नवाजा गया। कोंकणी कविता को एक नई जमीन कवि शंकर पाण्डुरंग शेणवी रामाणी (1922-2003) ने दी। 'जोगलांचे झाड' (1987), 'निळें निळें ब्रह्म', 'ब्रह्मकमल' और 'निरज्जन' काव्य-संग्रहों में इनकी जीवन-दर्शनात्मक वस्तुनिष्ठ दृष्टि दिखाई देती है। आपको भी साहित्य अकादमी के पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। कवयित्री विजयाबाय सरमळकर (1924) की रचनाओं में महादेवी वर्मा की भाँति नारी-वेदना की करुण कथात्मक अभिव्यक्ति हुई है। 1973 में इनका 'गोठलां' नामक काव्य-संग्रह प्रकाशित हुआ। इनमें अपने लेखन के प्रति जरा भी अभिमान नहीं है। ये बड़े ही शांत भाव से नारी-पीड़ा को चित्रित करने में निरत हैं।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी पुण्डलीक नारायण नायक (1952) का नाम कोंकणी साहित्य-जगत् में जाना-पहचाना हैं। इनका 'गा आमीं राखणें' एक श्रेष्ठ कोंकणी काव्य-संग्रह के रूप में प्रसिद्ध है। इस संग्रह में गोवा के सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन के ऐसे दाहक, व्यापक एवं सूक्ष्म चित्र हैं जिससे गोवा मुक्ति

के बाद के लोगों में स्वाधिकार, आत्मसम्मान एवं अस्मिता के भाव जाग्रत् हो सकें। पुण्डलीक नायक ने नई पीढ़ी के लोगों का नेतृत्व किया है।

पंढरीनाथ लोटलीकार के 'आमची भूंय' (65) काव्य-संग्रह में देश के भक्ति के भावपरक गीतों के स्वर विद्यमान हैं। भाषा की प्रांजलता इनकी विशेषता है। साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त चाफ्रा-द-कॉश्त की कविताएँ उनके 'सोश्याचे कान' नामक काव्य-संग्रह में संकलित हैं। जे.बी. मोरायश के 'नवी होंकल' (77), 'भितरलें तुफान' (84), 'एक भेंट एक पान' (2002) ये तीन काव्य-संग्रह प्रकाशित हुए। आपको भी साहित्य अकादमी के पुरस्कार से नवाजा जा चुका है। यूसुफ अ. शेख का 'गांठी' काव्य-संग्रह बहुत पहले 1984 में ही प्रकाशित हो चुका था। यह संग्रह कोंकणी में आत्मदर्शन का आईना बनकर आया। राम प्रभु चोडणेकार, भिकाजी घाणेकार (1942), स्वामी आनंद आगियार, जेम्स फर्नाण्डिस, पाद्री पेद्रु जे लोबु के क्रमशः 'निरंजन' (1984), 'चांफी', 'किर्णा' (85), 'स्तोत्रा' (1981) आदि कतिपय कवियों के काव्य-संग्रह प्रकाशित हुए। सुरेश बोरकार (1938) के 'वज्रथिकां' (1985) काव्य-संग्रह की कविताएँ दार्शनिक भावों से बोझिल होने के बावजूद अपनी एक अलग पहचान बनाने में कामयाब रहीं। मनोवांछित प्रेम के भावों को उजागर करती हुई उदय लक्ष्मीकांत प्रभु भेम्ब्रे की कविताओं का संग्रह 'चान्नयाचे राती' सन् 1986 में प्रकाशित हुआ। 1986 में प्रकाशित तोमाझिन कार्दोज़ के 'पाकळय' और प्रभाकर तेण्डुलकर के 'जैत' काव्य-संग्रहों में जहाँ गोवा के प्राकृतिक सौन्दर्य का चित्रण हुआ है वही पर यहाँ के लोगों के उत्तरदायित्व विहीन जीवन प्रणाली का भी चित्र खींचा गया है। इसी दौरान फादर लिन्यु-द- सा का अप्रतिम काव्य-संग्रह 'आडांबे' भी प्रकाशित हुआ। फादर प्रताप नायक, स्वामी सुप्रिय, जे.वी. सिक्वेरा, दियोगु मार्कुस फर्नाण्डिस आदि कवियों के क्रमशः 'जीवितांतली घडितां' (1980) एवं 'काजुले' (1983), 'काळिज मुरमुरें' (1984) 'काळजाचे उमाळे' (1987) एवं 'एक सपन अधुरें' (1988) 'गोंय म्हजें हांसता' आदि काव्य-संग्रह प्रकाशित हुए। रामकृष्ण जुंवारकार ने धार्मिक काव्य-लेखन की परंपरा को आगे बढ़ाया। 'पुज्जायिल्लो पाकळयों' (1974) और 'सुस्कारे' (1984) नामक दो काव्य-संग्रह गॉमिश के आए। कोंकणी शब्दों के चयन एवं उनके समुचित प्रयोग की असावधानी तथा काव्य हेतु और प्रयोजन के मिश्रण के कारण यहाँ कविता का स्वरूप गद्यात्मक हो गया है।

र.वि. पंडित, करमली, रायकर, नायक आदि कवियों की परंपरा में प्रकाश पाडगाँवकार (1948) का नाम आता है। इन्होंने अपनी कविताओं में स्वयं के क्षुब्ध भावों, विचारों एवं वेदनाओं को बहुत संजीदगी से सहज भाषा में व्यक्त किया है। इनकी कविताओं में नागरी जीवन सभ्यता के प्रति आक्रोश है। कवि का मानना है कि पाश्चात्य सभ्यता भारतीय संस्कृति को निगल रही है। आज के वास्तविक जीवन का उल्लेख करते हुए इन्होंने बताया है कि आज का मनुष्य अश्वत्थामा बन गया है। साहित्य अकादमी से पुरस्कृत पाडगाँवकार के 'उजवाडाचीं पावलां' (1986), 'वास्कोयन' और 'हांव मनीस अश्वत्थामो' (1985) के तीन काव्य-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं।

प्रकृति और प्रेम के कवि रमेश भगवंत वेळुस्कार (1947) की कविताओं में नाद एवं संगीत का अद्भुत तालमेल है। इनके 'मोरपाखां', 'माती' (1983), 'सावुलगोरी' (1989), 'आंगणी नाचता मोर मोरया', 'हिरण्यगर्भ' आदि विभिन्न भावभूमियों पर आधारित पाँच काव्य-संग्रहों ने कोंकणी कविता को एक नई पहचान दी। आपको 'सांवुलगोरी' नामक काव्य-संग्रह के लिए साहित्य अकादमी के पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है। रमेश वेलुस्कर के बाद समकालीन महत्त्वपूर्ण कवियों में साहित्य अकादमी पुरस्कार से

पुरस्कृत कवि माधव बोरकार (1954) का नाम आता है। आपके 'चँवर' (1969), 'वोतांतल्यो सावंळयो (1972), 'उजवाडाचो रुख', एवं 'पर्जळाचें दार' (1986), 'यमन' (1999), 'अव्यक्ताचीं गाणीं' (2002), आदि काव्य-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। इन संग्रहों में गोवा के जीवन एवं प्रकृति की माधुरी का भाव-विभाव पूर्ण ढंग से चित्रण हुआ है। इसी प्रकार हरदत्त खाण्डेपारकार के 'गीतोत्सव' में भावगीतों की खुमारी झलकती है। यशवन्त केळेकार, सुहास दलाल, नीला तेलंग और आर. रामनाथ के क्रमशः 'पुंजायिल्लीं ओंवळां', 'उमाळो', 'काळजाची भरती' एवं 'मळबरंगमाची' काव्य-संग्रह प्रकाशित हुए। भाव और भाषा की दृष्टि से इन संग्रहों का भी विशेष स्थान है।

कोंकणी काव्य-लेखन की शृंखला में प्रभाकर नाडकर्णी का 'गजलप्रभा', 'बळेसर शेरशायरीचो', 'शिशिरांतली शेंवते फुलां' और 'हांव एक बुदवंत' एवं नरेन्द्र बोडके, सुदेश लोटलीकार, संजीव वेरेंकार, आलेक्स गोएश, जॉन आगियार, दामोदर व्यंकटेश कामत, भरत नायक, काशीनाथ शाम्बा लोलयेंकार, अशोक भोंसले, निलबा खाण्डेकार, देवीदास कदम, शशिकांत पुनाजी के क्रमशः 'सुरंगां वळेसर', 'पैस', 'भावझुम्बर' एवं गांवांतली सांज' (2000) 'काजुले', 'जीण', 'जनेल', 'मन मन', 'काशी म्हण्टा' (1982), 'सूरवन' (2001), 'अग्नि' (2002), 'कोऽहम', 'उमज' (2002) आदि संग्रहों में समसामयिक परिवेशगत जीवन, प्रेम, प्रकृति के नाना रूपों को अभिव्यक्ति मिली है। इनके अतिरिक्त नयना सुर्लकार, माधवी सरदेसाय, सोयरु वर्दे, सिरिल सिक्वेरा, फादर बोतेल्यू, सिल्वेस्टर डिसौझा, रॉन ल्यूइस, एडवर्ड नाझरेथ, जेरेल्ड पिन्तु, फ्रान्सीस सालदान्ज्य, आम्ब्रोज डि सौझा, सिन्तिया क्वाद्रुस, फादर मोरेन डि सौझा, बेर्नादिनो इव्हारिस्तु मेण्डिस, शंकर परुळेकार, ऍन्थनी कोरय पिर्येकार, परेश नरेन्द्र कामत, अशोक काणेकार, गजानन जोग, नारायण देसाय आदि कवियों एवं कवयित्रियों के कतिपय काव्य-संग्रह एवं फुटकर काव्य-रचनाएँ आईं। कोंकणी भाषा प्रचार सभा के माध्यम से के. अनन्त भट्ट ने 'श्रीरामचरितमानस' का कोंकणी काव्यानुवाद 2004 में किया। इसी वर्ष प्रकृति का नयनाभिराम चित्रण करता हुआ गुर्गादास गावडे का 'जन्मफेरे' काव्य-संग्रह आया।

कोंकणी साहित्य में संपादित ग्रन्थों की सुदीर्घ परंपरा नहीं है। फिर भी कुछ गिनी-चुनी रचनाएँ आयी हैं। रघुनाथ विष्णु पंडित ने 'रत्नांहार' भाग-1 एवं 2, आनंदयात्री बाळकृष्ण भगवंत यानी बाकीबाब बोरकार ने 'कोंकणी कविता', मनोहरराय लक्ष्मणराव सरदेसाय ने 'स्वतंत्र गोंयातली कोंकणी कविता', चंन्द्रकांत केणी ने 'तीन दसकां' नाम से कोंकणी काव्य संकलन प्रकाशित किए। एक 'युवांकुर' नाम से युवा साहित्य सम्मेलन विशेषांक प्रकाशित हुआ। महिला कथाकार हेमा नायक ने भी 'अप्रूप' नाम से एक काव्य-संकलन का संपादन किया।

अभी हाल के वर्षों में समसामयिक प्रवृत्तियों एवं विभिन्न भावभूमियों पर आधारित कतिपय महत्त्वपूर्ण कोंकणी काव्य-रचनाएँ प्रकाशित हुईं, उनमें संजीव वेरेंकार का 'गांवांतली सांज', श्रीमती नयना आडारकार का 'मन सांवार', शुभु काशीनाथ गावडे का 'दखंळ', मनोज कामत का 'तांबशी', शशिकांत पुनाजी का 'उमज', नम्रता सातेलकार का 'थिंका', निलबा खांडेकार का 'अग्नी', प्रकाश पाडगाँकार 'व्हांवती न्हंय' आदि कवियों के काव्य-संग्रह प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त उल्हास प्रभुदेसाय एवं सुधा आमोणकार के क्रमशः 'कोंकणी देशभक्ति' तथा 'आत्म्याचें संगीत' नामक दो गीत-संग्रह प्रकाशित हुए। इन कवियों के अतिरिक्त शंकर भाण्डारी, पुरुषोत्तम सिंगबाल, प्रकाश थळी, सु.म. तडकोड, यशवंत पालेकार आदि प्रतिभाशाली कवियों की रचनाएँ पुस्तक का रूप तो नहीं ले सकीं किन्तु 'समकालीन भारतीय साहित्य',

'गोमन्त भारती', 'सुनापरान्त', 'कुळागर', 'राष्ट्रमत', 'जाग', 'ऋतु' आदि पत्र-पत्रिकाओं में बराबर छपती रहती हैं।

कथा-लेखन

कोंकणी साहित्य में कथा और कहानी के स्वरूप की अलग-अलग चर्चा की गई है। दंतकथा और लोकसाहित्य पर आधारित रचना को कहानी तथा आधुनिक साहित्यिक प्रणालियों से सबंधित रचना को कथा की संज्ञा दी गई है। कोंकणी कथा साहित्य के इतिहास में वि.स. सुखठणकार, लुसियु रुद्रिगीश, जॉर्ज आतायद लोबु आदि ने अंग्रेजी में कहानियाँ प्रस्तुत कीं। फेलेसियु कार्दोझ (1932) ने 1966 में रोमन लिपि में 'तूफान' नाम से कथा-संग्रह प्रकाशित किया। लक्ष्मणराव सरदेसाय ने मराठी और कोंकणी में कहानियों की रचना की। आधुनिक कोंकणी कथा साहित्य के जनक शणै गोंयबाब ने अपनी प्रतिभा से कथा-लेखन को जीवनशोध, परंपराशोध, भाषाशोध एवं शास्त्रसम्मत रूप प्रदान करते हुए उसे बहुआयामी बनाया। उन्होंने इसे मनोरंजन की दुनिया से निकालकर जीवन और समाज से जोड़ा। परिणामस्वरूप मनुष्य स्वभाव की शोध की मानसिकता कोंकणी कथा साहित्य पर हावी रही।

गोवा मुक्ति संग्राम एवं पत्रकारिता के व्यवसाय से जुड़े चंद्रकांत केणी (1934) को मूलतः कोंकणी कथाकार के रूप में जाना जाता है। केणीजी का साने गुरुजी, विनोबा भावे, रवीन्द्र केळेकार आदि से बड़ा निकट का संबंध रहा। आपकी कहानियाँ मुख्यतः प्रेममय जीवन, नारी की मानसिकता, विषय-वासना, लैंगिकता का अन्वेषण, आत्मबोध, देश एवं गोवा-प्रेम आदि जैसे विषयों पर आधारित हैं। साहित्य अकादमी के पुरस्कार से पुरस्कृत चन्द्रकांत केणी के 'धर्तरी अजून जियेताली' (1964), 'आषाढ पांवळी' (73), 'अळमी'(75), 'व्हंकल पावणी' (85), 'भूंय चांफी' आदि कहानी संग्रह प्रकाशित हैं। आपका 'एकलो एकसुरो' (73) लघु उपन्यास एवं 'तरेतरेंची संवगां' विभिन्न रचनाकारों की कहानियों का संग्रह है।

प्रसिद्ध कोंकणी कवि मनोहराय सरदेसाय के पिताश्री लक्ष्मणराव सूर्याजीराव सरदेसाय को मराठी और कोंकणी का सशक्त कथाकार माना जाता है। उन्होंने मराठी में सात सौ से अधिक कहानियों की रचना की। मराठी की तुलना में इन्होंने कोंकणी में कहानियाँ कम जरूर लिखीं लेकिन उनमें जीवन-विषयक नवीन संवेदनाओं को देखा जा सकता है। आपके 'खबरीः कांय कर्माच्यो कांय वर्माच्यो' (1982) ललित लेखन को वास्तव में कथा-कहानियों का संग्रह कहा गया। इस संग्रह को साहित्य अकादमी ने पुरस्कृत भी किया है।

बालकृष्ण भगवंत बोरकार, मनोहराय लक्ष्मणराव सरदेसाय, पाण्डुरंग भांगी, सुमन्त केळेकार, उदय भेम्ब्रे, यशवन्त पालेकार, विष्णु नायक, सुरेश काकोडकार जैसे वरिष्ठ साहित्यकारों ने कथा-लेखन में सक्रिय भूमिका निभाई, लेकिन दुर्भाग्यवश उनके कहानी-संग्रह प्रकाशित नहीं हो सके। म्हाम्बरो ने 1971 में 'प्रसादा-फूल' नाम से तेरह कथाकारों की प्रमुख कहानियों का संग्रह प्रकाशित किया। अरविन्द नारायण म्हाम्ब्रो यानी अना म्हाम्ब्रे को ॲब्सर्ड' शैली का उत्तम कथाशिल्पी कहा जाता है। उनके ललित लेखन में भी कथा-रचना का आभास मिलता है। आपकी 'गोंयची अस्मिताय' और 'पणजी आतां म्हातारी जाल्या' (1985) जैसी महत्त्वपूर्ण रचनाएँ आईं।

कोंकणी कथा को एक नई ऊँचाई देने वालों में दामोदर मावजो (1944) का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। 'कथा गांथन' (1974), 'जागरण' (75) 'रुमडफूल', 'भुरगीं न्हय ती आमची' उनके प्रसिद्ध कहानी-संग्रह हैं। आपका 1975 में 'सूड' नाम से लघु उपन्यास एवं 1976 में 'काणी एका खमिसाची' बाल-कहानियों का संग्रह प्रकाशित हुआ। रामकृष्ण जुवारकार ने कविता एवं एकांकी लेखन के साथ-साथ

कथा लेखन भी किया। उनका 1981 में लिखित 'आमच्यो खबरो' नाम से तीन भागों में कथा-संग्रह उपलब्ध है। कोंकणी कथा संसार के जाने-पहचाने नामों में महाबळेश्वर सैल (1945) का नाम भी आता है। इनकी अधिकांश रचनाओं में मानवीय जीवन-संघर्षों की गाथा को वाणी मिली है। आपकी 'तरंगा' (1991), 'पलतडचें तारु' एवं 'बायोनेट फायटिंग' (2005) में प्रकाशित महत्त्वपूर्ण कथा-संग्रह हैं। तोमाझिन कार्दोझ एवं प्रभाकर तेण्डुलकर के क्रमशः 'झेलो' (1985) और 'कथा-घोंस' (1986) नाम से कथा रचनाएँ आईं, जो विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

समकालीन कोंकणी कथा साहित्य में 1970 के बाद उक्त संग्रहों के अतिरिक्त पुण्डलीक नारायण नायक का 'मुठय', 'पिशान्तर' (77), 'अर्दूक', हेमा घुमटकार नायक का 'पसय' (82), 'शीला नायक-कोळम्बकार का 'ओली सांज', मीना गायतोण्डेकाकोडकार का 'दोंगर चवल्ला' एवं 'सपनफूल', जयमाला चोडणेकार-दणायत का 'कवासो' (78), माया असोल्डेकर-खरंगटे का 'घोंटेर', एन. शिवदास का 'गळसरी' एवं 'महारुख', दत्ता नायक का 'एक आशिल्लो सोंसो', अशोक भोंसलें का 'खुटावणी', ओलिविन्यु जुजे फ्रान्सिस गॉमिश का 'मन वोडटा-वोडना' (81), गजानन जोग (1952) का 'रुद्र' (86) एवं 'सोद', नारायण कृष्ण शेणवी बोरकार का 'तुज्या मोगा खातीर' (84) एवं 'चैतन्य' (2002), शशांक सीताराम का 'नबत', शशिकांत पुनाजी (1963) का 'करुंक गेलो एक', वसन्त भगवन्त सावन्त का 'खेमसुत्री', विट्ठल आवदियेंकार का 'आवय', नारायण बोरकार का 'तुज्या मोगा खातीर', अच्युत तोटेकार का 'चैत्रांगण' (88), देविदास कदम का 'कांदळां' आदि कथा-संग्रह प्रकाशित हुए। इन संग्रहों की अधिकांश रचनाओं में जीवन एवं प्रकृति बोधीय सौन्दर्य की अभिव्यक्ति हुई है। कोंकणी के सशक्त युवा कथाकार प्रकाश पर्येकार की अनेक कहानियाँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं, लेकिन अभी तक कहानी-संग्रह प्रकाशित नहीं हो सका है। प्रकाश की 'सुप्त ममता', 'महाबळी', 'वर्सल', 'सांपळा' आदि कई कहानियों का अंग्रेजी और हिंदी में अनुवाद हो चुका है। वर्ष 2003-04 के अंतर्गत एन. शिवदास एवं भालचन्द्र गाँवकार के क्रमशः 'भाड्. गर-साळ' एवं 'दोड्. गराचें आंवडें' नामक कहानी-संग्रह तथा वामन टाकेकार की 'मिरास' नामक लघुकथा-संग्रह भी प्रकाशित हुआ है। युवा महिला कथाकारों में साहित्य अकादमी से पुरस्कृत जयंती नायक (1962) के 'गर्जन' (90) और 'अथांग' (02) कहानी-संग्रह तथा वर्ष 2003-04 में 'राजरत्नां' एवं 'गांवरान' नामक दो लोककथा-संग्रह संकलित, सम्पादित और प्रकाशित हुए। विजया पै धुड्.गट का 'काजुले', सुरेखा तोटेकार का 'मृदगन्ध' तथा दीपा मुरकुण्डे का 'उमजणी' आदि कहानी-संग्रहों में नारी जीवन के विविध आयामों को चित्रित किया गया है।

उक्त पुरुष एवं महिला कथाकारों की कहानियों में विशेष रूप से गोवा के परिवेशगत जीवन एवं विभिन्न विचार-धाराओं को रेखांकित किया गया है। फ.य. प्रभुगाँवकार ने मराठी के मूर्धन्य साहित्यकार एवं गांधीवादी विचारक पाण्डुरंग सदाशिव साने के जीवन से संबंधित कहानियाँ 'श्यामची आई' (02) लिखी हैं। इसके पहले ॲन्थनी मार्टिन बारेंतु यानी टोनी मार्टिन ने 'मुक्त जीण जियेतना' (2001) नामक शीर्षक के अंतर्गत रोमन एवं देवनागरी में कहानियाँ लिखीं। दरअसल, गोवा कोंकणी की वास्तविक जमीन है, लेकिन इसके सीमावर्ती प्रदेशों में भी कोंकणी के विविध रूप मिलते हैं। जैसे कि कर्नाटक और केरल में भी कोंकणी कथा-लेखन का कार्य रोमन और देवनागरी लिपि के अतिरिक्त कन्नड़ और मलयालम में भी हो रहा है। कर्नाटक में फ्रान्सिस साल्दाज्य के कुल चौदह कथासंग्रह प्रकाशित हुए हैं। इनके अतिरिक्त सिरिल सिक्वेरा 'दुकां' (78) एवं 'कोशेदान केल्ली खून' (80), लिओ डि सौझा 'लिमाचो भुरगो', सिल्वेस्टर डि सौझा

'अपरिचित' (81), चा.फ्रा.डि. कॉश्त 'मेल्लें (94), जु.सा. आल्वारिस 'कथांहार' आदि कतिपय कथाकार एवं उनके कथा-संग्रह हैं।

उपन्यास लेखन

गोवा में कोंकणी उपन्यास-लेखन की परंपरा का कोई सुदृढ़ आधार नहीं मिलता। यह मराठी रचनाकारों के रचनात्मक घटाटोप में ही उलझकर रह गया। प्रारंभिक दौर में कोंकणी उपन्यास लेखन का कार्य रोमन और कन्नड़ लिपियों में हुआ। 1930 के आस-पास शणै गोंयबाब द्वारा लिखित देवनागरी लिपि में 'संसार बुड्टी' नामक उपन्यास का उल्लेख मिलता है, लेकिन इसे उपन्यास कहना तर्कसंगत नहीं होगा, क्योंकि यह कल्पना-रम्यता और वर्णन-शैली का उत्तम उदाहरण है।

कोंकणी के वरिष्ठ साहित्यकार रवीन्द्र केळेकार ने नारी जीवन की दारुण कथा को व्यक्त करते हुए 'तुळसी' नामक एक लघु उपन्यास की रचना की है। कथ्यात्मकता, व्यक्ति-चित्रण, स्थान एवं कालविशेष की दृष्टि से इसमें कई कलात्मक खामियाँ हैं, फिर भी यह कोंकणी उपन्यास की गंगोतरी है। कोंकणी उपन्यास लेखन की दिशा और दृष्टि की शुरुआत यहीं से मानी जाती है। कोंकण की परंपरा और जीवन-शैली का आभास 'तुळसी' में मिलता है। इसमें आंचलिकता के गुण भी मौजूद हैं। कोंकणी उपन्यास भी मानस-जीवन की कहानी के इर्द-गिर्द घूमता है।

कोंकणी उपन्यास को एक सही जमीन देने वाले रचनाकारों में पुण्डलीक नारायण नायक का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। मध्यवर्गीय मानसिकता को आधार बनाकर इन्होंने 1976 में 'बाम्बर' नामक उपन्यास लिखा। प्रस्तुत उपन्यास मनोविश्लेषणात्मक दृष्टि, मध्यवर्गीय सोच, जीवन-दृष्टि, जीवनानुभव आदि कई दृष्टियों से व्यापक एवं गंभीर नहीं बन सका है। फिर भी उपन्यास-लेखन की कड़ी को आगे बढ़ाने में इसका विशेष महत्त्व है। मध्यवर्गीय जीवन को उपन्यास के द्वारा रेखांकित करना ही अपने आप में खास महत्त्व रखता है। गोवा में खनिज उद्योगों के कारण यहाँ की प्राकृतिक सुन्दरता एवं जीवन-शैली के तहस-नहस की समस्या को पुण्डलीक नायक ने अपने 'अच्छ्छेव' (1977) उपन्यास में अद्‌भुत ढंग से चित्रित किया है। यह विचार, भाव, भाषा एवं शैली की दृष्टि से एक सशक्त उपन्यास है।

पोर्तुगीज ख्रिस्ती द्वारा हिंदू स्त्री के बलात्कार के परिणामस्वरूप उत्पन्न संतति 'विठू' नामक जाति के जीवन की करुण कथा को तुकाराम रामा शेट ने अपने 'पाखलो' (1978) उपन्यास में व्यक्त किया है। गोवा में गोरे लोगों को पाखलो नाम से संबोधित करते हैं। गोवा में 'विठू' जाति किसी को स्वीकार नहीं है। ऐसा लगता है कि उसे जीने का अधिकार ही नहीं है। जीवन-दृष्टि एवं कलात्मक अभाव के कारण इसकी गणना उच्चकोटि के उपन्यासों में नहीं हो सकी। लक्ष्मणराव सूर्याजीराव सरदेसाय ने 1979 में 'पापडां कवळयो' नामक लघु उपन्यास में गोपाल के असहाय जीवनयापन एवं उसके द्वारा आत्महत्या के प्रयत्न का चित्रण किया है। इसे आत्म-चरित्रात्मक उपन्यास भी कहा जा सकता है। सरदेसाय पोर्तुगीज एवं फ्रेंच भाषा के शिक्षक थे। उन्होंने आनातोल-द-फ्रान्स, एमिल झोला, गी-द-मोपांसा, जुलियो दिनिझ, सॉमरसेट आदि विश्वविख्यात साहित्यकारों की रचनाएँ मौखिक रूप से याद थीं। लक्ष्मणरावजी मूलतः मराठी भाषा के लेखक थे। कोंकणी में उन्होंने विरल रचनाएँ की हैं।

फादर आन्तोनियु परेर (1919) ने 1979 में 'वादळ आनी वारें' उपन्यास की रचना की। उन पर मॉरिस वेस्ट की 'द शूज ऑव्ह-द-फिशरमैन', पर्ल बक की 'सॅटन नेव्हर स्लीप्स' एवं जॉर्जीस बर्नानोस की 'ए कण्ट्री प्रीस्ट' की रचनाओं का प्रभाव है। स्वर्गीय पाद्री आन्तोनियु का उक्त उपन्यास मूलरूप से रोमन लिपि में लिखा हुआ है, जिसे कोंकणी अकादमी ने 2004 में प्रकाशित किया।

दामोदर मावजो (1944) ने अपनी रचनाओं में गल्फ देशों में स्थित मूल गोवा निवासियों की मानसिकता को चित्रित किया है। आपके प्रसिद्ध उपन्यास 'कार्मेलिन' में ईसाई एवं मुसलिम संस्कृति का अनूठा चित्रण है। अर्थाभाव के कारण नौकरी के लिए गोवा से कुवैत और दुबई जाने वाली ईसाई महिलाओं के यौन शोषण को बड़े बेबाक ढंग से वर्णित किया गया है। लेखक ने एक जगह स्वयं स्वीकार किया है कि 'मैं ईसाइयों के बीच रहकर उनकी संस्कृति का अभिन्न अंग बन चुका हूँ।' इस उपन्यास का हिंदी रूपान्तर नारायण शेजवलकर ने किया है, जिसे साहित्य अकादमी दिल्ली ने 1991 में प्रकाशित किया। ईसाई जीवन-संस्कृति पर आधारित हेमा नायक का 'भोगदण्ड' उपन्यास 1997 में प्रकाशित हुआ, जिसे 2002 में साहित्य अकादमी के पुरस्कार से नवाजा गया। इसमें नारी-वेदना की नारी द्वारा सफल अभिव्यक्ति हुई है। कई मायनों में यह 'कार्मेलिन' की तुलना में अधिक कलात्मक है। प्रस्तुत उपन्यास में गाँव और बाजार का सजीव चित्रण हुआ है। कोंकणी महिला रचनाकारों को इन्होंने नारी-वेदना को बड़ी खूबी से उभारा है। आंचलिकता की कसौटी पर भी यह खरा उपन्यास है। हेमा नायक को औपन्यासिक गुणों के कारण इस उपन्यास से काफी प्रसिद्धि मिली।

लोकमान्य कथाकार चन्द्रकांत केणी ने 'बर्मी दीस' एवं 'विराट' नाम से दो उपन्यासों की रचना की। प्रभाकर नाडकर्णी ने हिंदी के प्रसिद्ध ऐतिहासिक कथाकार भगवतीचरण वर्मा के 'चित्रलेखा' उपन्यास का 2002 में कोंकणी अनुवाद किया। वर्ष 2003-04 में अशोक भोसलो ने एवं मलयालम के प्रसिद्ध लेखक बी. कृष्ण वाध्यार के क्रमशः 'रातराणी' एवं 'दुर्षती' नामक उपन्यास आए। इन उपन्यासों में जीवन-संघर्ष का बड़ा मार्मिक चित्रण हुआ है। अशोक कामत के 'घणाघाय नियतीचे' उपन्यास में सारस्वत ब्राह्मण समाज की जीवन पद्धति का वर्णन मिलता है। जेस्स फर्नाण्डिस, फेलिसियु कार्दोझ, फादर आन्तोनियु पैरैर आदि ख्रिस्ती लेखकों ने रोमन लिपि में उपन्यास लिखे। इनकी रचनाओं में काल्पनिकता और रोमांस को विशेष रूप से महत्त्व दिया गया है। रमाकांत पोवळेकार, मनोहरराय ल. सरदेसाय, व्यंकटेश आळवेंकार जैसे हिंदू रचनाकारों की रचनाओं में उक्त विशेषताओं के साथ-साथ साहस, सौन्दर्य, प्रेम, गूढ़ जीवनानुभवों, परिवेशगत आंचलिक जीवन, क्रिस्ती-हिन्दू की साझा एवं अलग-अलग की संस्कृति आदि को भी रूपायित किया गया है।

ऐसा माना जाता है कि 1882 में जिप्सी नामक लेखक ने 'जाकाब आनी दुल्से' नाम से प्रथम कोंकणी उपन्यास लिखा। एदुआर्दु ब्रुनो-द-सौझा का 'किरिस्तांव घराबो' (रोमांस) उपन्यास उनकी मृत्यु के बाद प्रकाशित हुआ। इसमें आदर्श ख्रिस्ती जीवन का चित्रण किया गया है। रजिनाल्ड फर्नाण्डिस ने 'अरबेस्क', 'आमोरस्का', 'गुलाब', 'घातक्याक घाप', 'तोस्का', 'देवचाराचो', 'सांगती', 'धरुन अस्तुरी', 'सिंगापुराचो सावकार' आदि लगभग दो सौ से अधिक उपन्यासों की रचना की। इनके अतिरिक्त जुवांव कायतान-द-सौझा, आन्तोनियु डि सौझा, दियुगुन्यु डि मेलो, ए.वी.डि. क्रुझ, सी.डी.सी. रोमान, जे.एक्स. पैरैर, सेबास्तियांव गाब्रिएल-द-सौझा आदि उपन्यासकारों के नाम रोमांस लेखन के लिए जाने जाते हैं। आज जिस प्रकार से गुलशन नंदा, रानू आदि के उपन्यासों की बिक्री होती है, उसी प्रकार उस समय इन लेखकों के उपन्यास बिकते थे।

ललित निबंध

कोंकणी निबंध लेखन की शुरुआत मोटे तौर पर 1932 में 'वोंवळां' नामक संपादित पुस्तक में कुछ गिने-चुने लेखों के संग्रह से मानी जाती है। इसके अतिरिक्त 'आवय' (माता) शीर्षक की पुस्तक में कुछ हस्तलिखित एवं कुछ नियतकालीन पत्रिकाओं से लेखों का संग्रह किया गया। उस समय यह एक स्तुत्य

प्रयास किया गया, क्योंकि इससे अन्य संपादकों के लिए एक नया मार्ग सुनिश्चित हुआ। कालान्तर में प्रोफेसर आर्मान्द मिनेझिस, रेव्हरण्ड हे. ऑलिम्पियु माश्कारन्हेयश, आनंदयात्री बाळकृष्ण भगवंत बोरकार (बाकीबाब बोरकार), लक्ष्मणराव सरदेसाय, मंजेश्वर गोविन्द पै, दिनकर देसाय, पुरुषोत्तम लक्ष्मण देशपाण्डे, मंगेश पाडगाँवकार, हिराबाय कर्नाड जैसे विचारवंतों ने ललित निबंधों का निर्माण किया। 1960 में 'स्वाती' निबंध संकलन का घर-घर में वाचन होता था। इसमें मुख्य रूप से पुर्तगाली शासन को केन्द्र में रखकर निबंध लिखे जाते थे, उनका संबंध शेष भारत से उतना नहीं था। मराठी भाषा के साहित्य में भी इन्हीं का गुणगान होता था। रवीन्द्र राजाराम केळेकार एवं रघुनाथ विष्णु पंडित जैसे मूर्धन्य विचारवंतों ने राष्ट्रपिता मोहनदास करमचंद गांधी के विषय में कोंकणी पुस्तकों की रचना की। पंडितजी ने गांधी के सैकड़ों छायाचित्र खींचकर कोंकणी प्रेक्षकों को दिखाए। आज के प्रचलित नोटों पर गांधी का चित्र पंडित द्वारा ही खींचा गया है। विष्णु पंडित जी ने अपने पुत्र चंद्रशेखर के नाम से 'दिसपट्टी' (दिन पट्टिकाएँ) लिखीं। केळेकार ने भी 'वेळेव्यल्या घुला' शीर्षक से दिनपट्टका लिखी। उन्होंने 'उजवाडाचे सूर' (1972) लिखकर भारतीय दर्शन का कोंकणी में परिचय करवाया। जहाँ उनके 'हिमालयांत (1971) निबंध रचना से प्रवास वर्णन का पता चलता है, वहीं पर 'ब्रह्माण्डाचे ताण्डव' से खगोलशास्त्रीय चिंतन का। केळेकार के अध्ययन, चिंतन, मनन का परिचय उनके 'भजगोविन्दम्' (1973) और 'सांगाती' (1977) इन दो रचनाओं से भी होता है। विश्वकवि गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर का सम्यक् परिचय कोंकणी में कराने का श्रेय आपको जाता है। गोवा की बहुप्रसिद्ध पत्रिका 'जाग' का संपादन केळेकार जी ने पच्चीस वर्ष तक किया। इन्होंने अपने संपादन में गांधी, विनोबा, टैगोर के दर्शन के साथ-साथ समाजवाद, पूँजीवाद, उपभोक्तावाद, आतंकवाद जैसे समसामयिक विषयों की ओर कोंकणी पाठकों का ध्यान आकर्षित किया।

आजकल सहायक संपादक के रूप में 'जाग' की सम्पूर्ण जिम्मेदारी माधवी सरदेसाय उठा रही हैं। इनके पूर्व केळेकार के अनुज सुमन्त राजाराम केळेकार पत्रिका की देखरेख कर रहे थे। रवीन्द्र केळेकार ने पत्रिका का संपादन करते हुए 1961-62 में क्रमशः 'कथा आनी काणयो' (कथा एवं कहानी), 'नवीं शाळा' (नई पाठशाला) और 'लाला आनी बाला' (नाटक) की रचना की। आपका चिंतनपूर्ण निबंध-संग्रह 'आमोरेर' 2003 में प्रकाशित हुआ। इसमें 'देश भोवंडून पळोवंक जाय', 'सारे जहाँ से अच्छा', 'डॉ. लोहिया', 'राष्ट्रपतिभवनांत', 'विश्वसुन्दरी', 'भगतसिंग सपनांत', 'सॉक्रेतिश' आदि विभिन्न विषयों, विचारों एवं भावों से सम्बंधित कुल बीस निबंध संकलित हैं।

एस.एम. बोर्जेस के 'Triumphof Konkani' अंग्रेजी निबंध-संग्रह का अनुवाद 'कोंकणी भाशेचें जैत' नामक शीर्षक से किया गया। इनके अतिरिक्त दत्ता दामोदर नायक, प्रकाश तळवणेकार, रजनी भेम्ब्रे और एल. सुनीता के क्रमशः 'जाय काय जूय', 'गोंय आनी गोंयकारपण' 'कोंकणी निबंध' एवं 'चिंतन-अनुचिंतन' निबंध-संग्रह प्रकाशित हुए। आन्तोनियु-द-सौझा ने शास्त्रविज्ञान से सम्बंधित लेखन-कार्य किया। उनके 'चन्द्रीम तारवां', 'हिपासया प्रितुम तपासता', 'संवसार अजापाँचें बिराड' (1980), 'कुडीचें विजमित आनी भलायकेचे' (82) आदि निबंध-संग्रहों ने कोंकणी भाषा को समृद्ध किया।

दरअसल, शोधकार्य लेखन की दिशा कोंकणी भाषा और साहित्य के जनक शणै गोंयबाब ने दिखाई थी। जिनका अनुकरण करते हुए वासुदेव कामत वाघ (1910-1965), सुहास दलाल, नंदकुमार कामत आदि निबंधकार निबंध-लेखन की दिशा में सक्रिय भूमिका का निर्वाह कर रहे हैं। वर्ष 2002 में दत्ता श्रीपाद नायक ने 'घटक राज्याच्यो केल्ल्यो भोयो भोयो आता तरी थारतोल्यो व्हय?' निबंध-संग्रह आया।

फादर आन्तोनियु परेरा के 'साश्टीची ताम्बडी माती' अर्थात् 'सासष्टी की लाल मृत्तिका' पुस्तक में कुंकळळी-सासष्टी में धर्मान्तर आन्दोलन के दौरान पाद्री रुदॉल्फ आकाविया एवं उनके सह्योगियों की मृत्यु का चित्रण हुआ है। कर्नाटक के पाद्री रुदॉल्फ-डि-सौझा ने 'कार्मेलायटांचो', 'तकलेंतलो देवचार' अर्थात् 'मस्तिष्क में स्थित शैतान' एवं वि.एल. रेगो ने 'योग अभ्यास' की पुस्तकें लिखी हैं।

वस्तुतः कोंकणी निबंध-संकलन बहुत कम प्रकाशित हुए, लेकिन 'उदेन्तेचें साळिक', 'अंकुर', 'कुळागर', 'कोंकण टाइम्स', 'कोंकण भारती', 'गुलाब', 'गोमन्त भारती', 'गोंयचों आवाज', 'जाग', 'जैत', 'परमळ', 'परशुराम' 'पुनव', 'प्रजेचो आवाज', 'मीर्ग', 'त्रिवेणी', 'दर महिन्याची रोटी', 'दिवटी', 'नवें गोंय', 'राष्ट्रमत', लोकसाद', 'वावराड्याचो इश्ट', 'विद्या', 'वांगडी', 'सत', 'साद', 'साळिक', 'सूनापरान्त' आदि पत्र-पत्रिकाओं में कोंकणी-निबंध भरे-पड़े हैं और निरंतर प्रकाशित भी हो रहे हैं।

अरविन्द नाराण उपनाम अना म्हाम्ब्रो (1938), अच्युत तोटेकार, अभयकुमार वेलिंगकार, किसन कामत, गजानन जोग, गोविन्द मुद्रस, चन्द्रकांत केणी, पुण्डलीक नारायण नायक, पुरुषोत्तम सिंगबाळ, मनोहरराय लक्ष्मणराव सरदेसाय, महाबळेश्वर सैल, मॉन्सियोर कार्मु दा सिल्व, तानाजी हळर्णकर, तुकाराम शेट, तेनसिंग रुद्रिगीश, दत्ताराम सुखठणकार ('मान्नी पुनव', 1978), दामोदर मावजो, दीपा मुरकुण्डे ('भौरंगी जीण', 'पडबिम्ब' 2002), नारायण लाड (सांळकां), नीळकण्ठ धुमे, लुसियु रुद्रिगीश, लीना हेदे, वसन्त नेवरेंकार, विष्णु नायक, रवीन्द्र केळेकार, रामकृष्ण जुवारकार, रामचंन्द्र शंकर नायक, लक्ष्मणराव सूर्याजीराव सरदेसाय, शणै गोंयबाब, शान्ताराम हेदो, शंकर भण्डारी (पावलां कणकणी), श्याम वेरेंकार, सॉतेर बारेंतु, हेमा पुण्डलीक नायक आदि रचनाकार निबंध लेखन की दिशा में सक्रिय हैं। इनकी रचनाओं में मुख्यतः गांधी, लोहिया की विचारधारा, धार्मिक सद्भाव, आनंदवाद, छायावाद, स्त्रीवाद, देशभक्ति, अन्य समसामयिक आदि विचारधाराओं एवं मान्यताओं का समावेश है। गोवा-मुक्ति के बाद की सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, राजकीय कार्य-व्यापार, शिक्षा-विषयक एवं अन्य ज्वलन्त विषयों पर चिंतन और व्यंग्यपूर्ण निंबध लिखे गए। 'गोमंतकीय सुशेगाद' अर्थात् आनंदमय कर्महीन जीवन की भयावह स्थिति की ओर भी लेखकों का ध्यान गया और इस मानसिकता के खिलाफ उन्होंने जनता को कर्म का संदेश दिया। आज की चुनौतियों का सामना आनंदमय कर्महीन जीवन से नहीं की जा सकती।

नाटक, एकांकी तथा तियात्र

गोवा कला और संस्कृति की भूमि है। यहाँ भी महाराष्ट्र की भाँति प्रायः आए दिन नाटकों का मंचन होता रहता है। गोवा चर्चों की भाँति मंदिरों का प्रदेश है। यहाँ लगभग सौ से अधिक मंदिर हैं। प्रत्येक मंदिर के वार्षिक जात्रोत्सव, वसंतोत्सव एवं नाट्य स्पर्धाओं का आयोजन होता है। इन आयोजनों में एक-एक मंदिर में कम-से-कम पाँच-छः नाटक दिखाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त लगभग प्रत्येक तालुके एवं शहरों में नाट्यशालाओं की स्थापना की गई है। गोवा कला अकादमी के दीनानाथ मंगेशकर सभागृह का अपना विशिष्ट स्थान है। इसके अंतर्गत नाट्य विद्यालय है, जहाँ नाटक की पढ़ाई और अभिनय की शिक्षा दी जाती है। यहाँ पारंपरिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं समसामयिक विषयों के नाटक दिखाए जाते हैं। शणै गोंयबाबा ने 1933 में 'झिलबा राणो' नाटक लिखकर आधुनिक नाट्य लेखन परंपरा की नींव डाली। इसी वर्ष आचार्य रामचन्द्र शंकर नायक ने 'चवथीचो चन्द्र' नामक एकांकी की रचना की। इन्हें एकांकी का जनक कहा जाता है। दादा वैद्य ने अपने 'प्राची सभा' पत्रिका के माध्यम से कोंकणी की कविताएँ एवं नाटक प्रकाशित किए। अंतरमहाविद्यालयीन नियतकालिक 'विद्या' के चार अंकों द्वारा कोंकणी

एकांकी लिखे गए। कोंकणी जगत् के विचारवंतों, साहित्य-रसिकों, पाठकों, श्रोताओं एवं दर्शकों की मानसिक भूख शांत करने के लिए हास्य-व्यंग्य, करुण-मौलिक एवं अनूदित नाटकों और एकांकियों का लेखन एवं मंचन हुआ। गोवा कला अकादमी द्वारा प्रत्येक वर्ष नाट्य-स्पर्धाओं के आयोजन से दिगंबर सिंगबाळ, श्रीधर कामत बांबोळकार, अरुणकुमार साळगाँवक., किरीटकुमार प्रभू, सुनील नायक, दिलीप गाड़ आदि सुप्रसिद्ध दिग्दर्शकों का नाटक के क्षेत्र में उदय हुआ।

पुण्डलीक नारायण दाण्डो की 'ताची करामत' एवं 'निमित्ताक कारण', किसन कामत की 'दोन आनी दोन' (1960), 'बाप्पा शिवराक', 'बाप्पाली म्हस', 'बाप्पाली हुडदामेथी' एवं बाप्पा भजीं गाळटा', कृष्णा लक्ष्मण मोयो की 'घाडी कृष्णा' (81), 'तुळशीचें लग्न' (85) एवं 'हारशाच्या कुडींत भांगराची दिवली' (एकांकी-80), वसन्त वैकुण्ठ कारो, रघुवीर नेवरेंकार की 'पोपेबाबाली मुंबय', विश्वनाथ संझगिरी, अवधूत हेगडो देसाय, विनय सुर्लकार की 'खावची पाणां' एवं 'सात मजली हांसो' (एकांकी) आदि बुजुर्ग नाटककारों की रचनाएँ आयीं। कवि मनोहरराय सरदेसाय ने 'स्मगलर' में तीन नाटक संगृहीत किए। आपकी 'आयज रे घोलार पडली बडी' रचना काफी लोकप्रिय हुई। इसके अतिरिक्त सरदेसाय की 'साखरभात', 'दोतोर बातियांव' एवं 'मोग आनी रगत' अन्य चर्चित रचनाएँ हैं। रवीन्द्र केळेकार ने भी 'मुक्ति', 'लीग', 'पिसोळीं', 'पैज', 'इगो' आदि एकांकियों की रचना की।

कोंकणी नाटक के इतिहास में पुण्डलीक नारायण नायक के योगदान को विस्मृत नहीं किया जा सकता। इन्होंने कोंकणी नाटक को हास्य एवं शोक की दुनिया से निकालकर सामाजिक जीवन की समस्याओं से रू-बरू कराया। 'गाँवघनी गांवकार', 'आळशाक वाग खातलो', 'आकाशमंच', 'छप्पन थिगळी येसवंत', 'चौरंग' जैसी इनकी एकांकियों ने विचार, भाव, भाषा एवं मंचन की दृष्टि से लोगों को आकर्षित किया। कोंकणी नाटक को एक नया आयाम मिला। इनके अतिरिक्त अशोक कामत ने 'अशोकांकी', 'म्हजी भूंय म्हजो मोग' एवं 'कोण कोणाचो न्हय' (1968-75), हेमा नायक ने 'भायली गोडी', एन. शिवदास ने 'पिसांट' (1979), 'फॉरेन जांवय' (नाटक), 'ज्योतिस फितिस', 'पुतळे', 'भायर भीतर' (एकांकी), दिलीप बोरकार ने 'भरते भार', 'आण्टिली गादी', 'वर्ग शत्रु', रामकृष्ण जुंवारकार ने 'भागिरथी' (70), 'आमचें राज्य' (71), 'अनवळखी' (75), रवीन्द्र नमशीकार ने 'आंकवार काजारी', दत्ताराम दामोदर कामत बाम्बोळकार ने 'डॅडी', उदय लक्ष्मीकांत प्रभू भेम्ब्रे ने 'कर्णपर्व' नामक नाटक एवं एकांकियों की रचना की। दत्ता नायक एवं फादर निकोलॉव्ह पेरैर का नाम भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन नाटककारों ने पौराणिक कथाओं के माध्यम से आधुनिक जीवन की समस्याओं को चित्रित किया और साथ ही कोंकणी रंगमंच को विविध विषयों, भाषा और भावों से सजाया।

कोंकणी नाटककारों में प्रकाश थळी का नाम भी प्रमुखता से लिया जाता है। इन्होंने 'एक आसलो बाबू', 'अजीबपुरातली कल्पकथा', 'उजवाडतलें आयज ना फाल्यां', 'प्रिया तुज्या मोगाखातीर', 'वाट पळयतानां दुकां गळयतां', 'आयलें हड्डयार घातलें खोड्डयार', 'घर म्हजें हांव धनीं', 'उक्तावण', 'तीन खेतीं शाणी सुरतीं' (87) आदि नाटकों एवं एकांकियों की रचना की और साथ ही अन्य भाषाओं के नाटकों का कोंकणी में अनुवाद भी किया। भरत नायक ने 'चपलांहार', 'बॉबी न्हिदता', 'चमाड्यक चिमटों, 'भेरें भेरें टुणटुणें' आदि पन्द्रह लघु नाटिकाएँ लिखीं। चन्द्रकान्त पार्सेकार ने 'कोंकणी एकांकिका (67) एवं 'देंवचार आनी हेर कोंकणी एकांकिका' लिखीं। कतिपय उभरते हुए एकांकीकारों में सु.म. तडकोड, धर्मानंद वेर्णेकर, दत्ताराम बांबोळकार, दिलीप कुमार नायक, तुकाराम शेट एवं मधुसूदन बोरकार ने क्रमशः 'कॅस्केड', 'एक

जयराम साजुलो', 'वनमहोत्सव', आजुन शाळा सुटूंक ना', फुटपायरी', आमीं' एवं 'एक जुंवो जियेता', 'हांसोळी' एकांकियों की रचना की।

इनके अतिरिक्त मीना सुरेश काकोडकर, हेमा नायक, नयना आडारकार, अभयकुमार वेलिंगकार, अशोक भोंसले, तेनसिंग रुद्रिगीश, सतीश सोनक, द.वा. तळवणेकार, अनिरुद्ध बीर (गॉन व्युइथ-द-विण्ड), कमल कामत (आन्धळो मागता एक दोळो) आदि नाटककारों ने अपने-अपने तरीके से रचनात्मक योगदान दिया। शैरॉन माझारेलो, माया खरंगटे, श्रीकांत शम्भू नागवेकार ने क्रमशः 'जिवीत एक तियात्र', 'चौफूल', 'खगोलशास्त्रीय नाट्यांगण' जैसी लघु नाटिकाएँ लिखीं। विजय विट्ठल थळी ने 2002 में स्वतंत्र कोंकणी संगीत नाटक 'संगीत सैमाचो खेळ' की रचना की। देवदासी प्रथा के विरोध में अविनाश यशवन्त च्यारी का 'एका विचाराची सुरवात' नाटक 2003 में आया। महेश चन्द्रकान्त नायक ने महाविद्यालयीन जीवन पर आधारित 'ऑल फॉर यू' की रचना की। प्रकाश वजरीकार का 'आनी एक बुटोफुलला' नामक नाटक 2004 में प्रकाशित हुआ। प्रस्तुत नाटक में मुख्यतः यह बताया गया है कि बन्धन-युक्त जीवन मनुष्य को संवेदनहीन बना देता है। फलतः जीवन खोखला और व्यर्थ हो जाता है। इन नाटकों में यह दिखाया गया है कि जन-सामान्य में जो ऊर्जा-स्रोत है उसे जाग्रत् करने की आवश्यकता है।

कोंकणी में मौलिक लेखन के साथ-साथ अन्य भाषाओं के साहित्य के अनुवाद का कार्य भी होता रहा। शणै गोंयबाब ने तो कई कृतियों का अनुवाद किया। इनके अतिरिक्त आनंदयात्री कवि बाळकृष्ण भगवन्त शेणवी बोरकार द्वारा मराठी से 'संशय कल्लोळ', पाण्डुरंग भांगी द्वारा अंग्रेजी से 'सालोमें', रामकृष्ण जुंवारकार ने फ्रेंच नाटककार मोलियेर के 'Le Bourgeois Gentillohmme' से 'भुतेबाब' नाम से अनुवाद हुए। मनोहरराय लक्ष्मणराव सरदेसाय ने फ्रेंच नाटककार जॉर्जीस फिदॉ के 'Feu La Mere De Madame' कृति का 'शेजाय्याली सासुमांय' एवं शान्ताराम हेदो ने 1912 में पुर्तगीज नाटककार आल्मैद गारैट के 'Frei Luis De Souza' कृति का कोंकणी में अनुवाद किया। जिस प्रकार से कोंकणी उपन्यास के साथ रोमानी उपन्यासों की चर्चा होती है उसी प्रकार कोंकणी नाटकों के साथ 'तियात्र' की। इसका लेखन रोमन लिपि में हुआ है और इसके अधिकांश लेखक 'तियात्रिस्त' ख्रिस्ती हैं। प्रेमानंद लोटलीकार एवं पी. सांगोडकार जैसे हिंदुओं ने भी 'तियात्र' की रचना की है।

तियात्र में प्रत्येक दिवस को महत्त्व न देकर घटनाओं के आधार पर कहानी रची जाती है। कहानी में संगति लाने के लिए पाश्चात्य संगीत के आधार पर कोंकणी गीत गाए जाते थे। उनके बीच कई मध्यांतर होते थे, परंतु वर्तमान काल में तियात्र का स्वरूप परिवर्तित होने लगा है। अब तियात्र में मध्यांतर लुप्त होने लगे हैं और संवादों में सूक्ष्मता एवं रचना में कलात्मकता तथा कहानियों में वैविध्य लाने का प्रयास हो रहा है। यहाँ एक बात का स्पष्टीकरण करना जरूरी है कि कोंकणी नाटक और तियात्र में काफी अन्तर है। अब प्रामाणिक प्रयत्नों से तियात्र का निर्माण कर इसे विश्व स्तर पर लाने की कोशिश की जा रही है। गोवा विधानसभा के भूतपूर्व सभापति तोमाझिन कोर्दोझ, फादर फ्रेडी डी कॉश्त एवं विल्मिक्स विल्सन के क्रमशः 'काण्टेच काण्टे' (1981), 'समाजसेवा' एवं 'झगझगता तितलेंय भांगर न्हय' (88), 'बाप्पा', 'दुरीग' तियात्र अत्यधिक लोकप्रिय हैं। इनके अलावा पैट्रिक दौराद और एम. बॉयर के तियात्र भी सराहनीय हैं।

इधर के वर्षों में चर्चित तियात्र-लेखक मायक मेहता एवं आग्नेल फर्नाण्डिस के क्रमशः 'पावल म्हजें चुकलें', 'नातें' तथा विष्णु सूर्या वाघ की 'सुवारी', रजनी भेम्ब्रे की 'आळ' एवं 'सुखी संवसार', गोकुळदास मुळवी की 'क्रान्तिज्योति' (एकांकी) आदि प्रसिद्ध रचनाएँ प्रकाशित हुईं। इनके अतिरिक्त श्रीकांत

नागवेंकार का 'खगोल शास्त्रीय नाट्याङ्गण' एवं 'कायदो तियात्राचो' नामक पुस्तकों का देवनागरी में प्रकाशन हुआ। वर्ष 2003 में गोवा कोंकणी अकादमी द्वारा मार्क द आरावजो द्वारा लिखित 'भूंयकांप' (भूकम्प) का लोकार्पण हुआ। गोवा में ख्रिस्ती लेखकों ने तियात्र की रचना की, लेकिन कर्नाटक के ख्रिस्ती लेखकों ने नाट्य-लेखन को ही आगे बढ़ाया। जे.पी. सालदाञ्य ने जहाँ 53 नाटक लिखे वहीं पर दोल्फि लोबु कास्स ने सात और सिरिल सिक्वेरा ने बारह एवं जे.एस. आल्वारिस ने नौ नाटकों की रचना की। चा.फां. दि कॉश्त ने 'तरणें तरणें मोणें' (73), 'सुणें माजर हांसता' (77), फादर लुईस बोतेल्यु ने 'बाळ आलेस' एवं 'देख देवीक' नाटक लिखकर कोंकणी नाटकों के स्तर में वृद्धि करने का अथक प्रयास किया।

पत्रकारिता

भारत में ही नहीं अपितु एशिया महाद्वीप में मुद्रण की व्यवस्था सर्वप्रथम गोवा में पुर्तगाली शासन द्वारा 6 सितम्बर, 1556 को की गई। शब्दकोश, व्याकरण की पुस्तकें गोवा में मुद्रित की गईं। यहाँ पत्रकारिता की शुरुआत 'गाजेति-द-गोवा' नामक पत्र से 22 दिसम्बर, 1821 को हुई। पत्रकारिता के माध्यम से गोवा में ज्ञान की ज्योति जलाई गई। यह ज्योति जर्मनी में 1663, बंगाल में 1780 में जली। 1840 में कानोन कायतानु जुवांव पीरीश के संपादकत्व में पुर्तगीज भाषा में 'आल्मानाक-द-गोवा' नामक पत्र निकला, जिसमें विपुल मात्रा में जीवन एवं ज्ञान-विषयक सामग्री छपने लगी। इस ज्ञान-संचयन से लोगों को काफी लाभ होने लगा। गोवा मुक्ति के पश्चात् 1966 से उक्त पत्र 'गोवा आल्मानाक' के नाम से प्रकाशित होने लगा। जे.सी. फ्रान्सीस ने 'उ कोंकानी' का संपादन कर कोंकणी पत्रकारिता का प्रथम अध्याय लिखा, लेकिन आश्चर्य की बात है कि इसका आरंभ मुंबई से हुआ। इनके अतिरिक्त 1891, 92, 93 में क्रमशः सी.एफ. फ्रान्सिस्कु, सेबॅस्तियांव जीसस डायस गोमान्ति, सेबॅस्तियांव जीसस डायस के संपादकत्व में 'उ लिउस कोंकानी' (साप्ताहिक), 'उ कोंकानी', 'उ पुव गोआनु' नामक पत्रिकाएँ आईं। 'लेतुराश आमानाश', 'आ सिविलिसासांव इंदियान' नाम की दूसरी पत्रिकाएँ भी आयीं। 1894 में एक दैनिक भी शुरू हुआ लेकिन शीघ्र ही बंद भी हो गया। यह कोंकणी-पुर्तगीज और अंग्रेजी भाषाओं में मुद्रित होता था। कालान्तर में 'आ लुझ', 'उ एको' (1907), उ गोआनुं' (1908) 'उ आमिगु दु पुव' (1916), 'आवे मारिया' (1920) नामक पत्रिकाएँ क्रमशः इनासियु एक्स रुद्रिगीश, बी.एफ. काब्र, होनारातु एवं एफ.एक्स. फुर्तादु, एस.एक्स व्हाज, आन्तोनियु व्ही. दे क्रुझ के संपादन में निकली, जिन्होंने कोंकणी पाठकों का खूब ज्ञानवर्धन एव मनोरंजन किया।

आगे चलकर कोंकणी भाषा में पत्रिकाओं के शीर्षक दिए जाने लगे, जिनमें 'उदेन्तेचें साळिक' (1889-94 मासिक-पाक्षिक-पुणे, सं. एदुआर्दु जे. ब्रुनो द सौझा), 'सांजेचें नकेत्र' (1907 दैनिक मुंबई, सं. बी.एफ. काब्राल), 'दर म्हयन्याची रोटी' (1914 मासिक, सं. फादर लुदोविक पैरेर— जो आज भी फादर मोरेन द सौझा गोवा से प्रकाशित करते हैं), 'आमचो संवसार' (1928, सं. जे.सी.एफ. सौझा), 'उदेन्तेचें नेकेत्र' (1933, सं. फादर एल.ए. फर्नाण्डिस एवं फादर लाक्तानसियु आल्मैद), 'वावराड्यांचो इश्ट' आदि प्रमुख हैं। ये सारी पत्रिकाएँ रोमन लिपि में निकलती थीं।

1953 से कोंकणी पत्रिकाएँ देवनागरी लिपि में मुद्रित होने लगीं। इसी वर्ष आनंदयात्री कवि बालकृष्ण भगवन्त शेणवी बोरकार के संपादन में मुंबई से 'प्रजेचो आवाज' रोमन और देवनागरी लिपि में प्रकाशित हुई। मनोहरराय सरदेसाय एवं फादर एच.ओ. मस्कारन्हेयश ने मुंबई से 1952 में संयुक्त रूप से

'साद' निकाला, जोकि कोंकणी भाषा मंडल की मुख्य पत्रिका है। रवीन्द्र केळेकार के संपादकत्व में 1959 में 'गोमंत भारती' निकली, जिसमें उन्होंने विविध विषयों पर चर्चा-परिचर्चा कर पाठकों को नई सामग्री परोसी। इसके साथ ही नए-नए लेखकों को प्रोत्साहित भी किया।

गोवा मुक्ति के बाद यहाँ की जनता के सपनों को उजागर करते हुए फेलिसियु कार्दोझ ने 'गोंयचो साद' नामक पत्रिका निकाली और कोंकणी के नए शब्दों का प्रयोग करते हुए पुर्तगीज के शब्दों को हटाने का प्रयत्न किया। हिंदी भाषा साहित्य के इतिहास में एक बार जैसे उर्दू, फारसी और संस्कृत को लेकर हिंदी की अस्मिता पर सवाल खड़ा हुआ था, उसी प्रकार गोवा में पुर्तगीज शब्दों को लेकर भी थोड़ा-सा भ्रम पैदा हुआ। दरअसल, कार्दोझ के पहले यह कार्य मॉन्सियोर सेबॅस्तियांव रुदॉल्फ दाल्गाद ने प्रारंभ किया था। इन्होंने 'सत' नामक पत्रिका प्रकाशित की थी, जिसे आगे चलकर 1967 में पुर्तगीज पत्रिका 'अ विद' में विलीन कर दिया गया, जिसे 'दिवटी' शीर्षक से प्रकाशित किया जाने लगा। उस समय 'लोकसाद' नाम से साप्ताहिक पत्रिका निकलती थी, जिसमें सुस्पष्ट विचार, अन्याय के प्रति जागरण एवं कोंकणी भाषा के प्रति आदर के भाव व्यक्त किए गए।

पत्रकार जगदीश वाघ ('उजो'), लोकसभा प्रतिनिधि अमृत कांसार ('अंकुर'), साहित्यकार मनोहरराय लक्ष्मणराव सरदेसाय एवं अना म्हाम्ब्रो ('साळिक', 1960), वकिल सुहास दलाल ('परमळ'), उद्योगपति गुरुनाथ केळेकार एवं मनोहरराय लक्ष्मणराव सरदेसाय ('नवें गोंय' 1962, स्मरण रहे कि इसी नाम से शणै गोंयबाब ने भी त्रैमासिक पत्रिका निकाली थी), पत्रकार यशवन्त पालेकार ('कोंकण भारती, 1968), पत्रकार चन्द्रकान्त केणी ('त्रिवेणी'), स्वातंत्र्यसेनानी एव्हाग्रीयु जॉर्ज ('उजवाड'), साहित्यकार सुरेश काकोडकार ('पुनव', 1973, प्रकाशक : गुरुदास पै, सोबीत साहित्य), राजकीय विचारवंत रवीन्द्र केळेकार ('जाग', 1974, प्रकाशक : सुमन्त केळेकार, जाग प्रकाशन), शिक्षक प्रकाश थळी ('कुळागर', केवल गद्य रचनाएँ, प्रकाशक : चन्द्रकान्त केणी, 1978), हेमा धुमटकर नायक ('चित्रंगी', स्त्री शिक्षा, 1980), समाजसेवक दत्ता नायक ('सौंगडी') जैसे विविध क्षेत्रों से निकट रहे व्यक्ति भी पत्रिकाओं का संपादन कर रहे थे।

दैनिक 'राष्ट्रमत' (संपादक : चन्द्रकान्त केणी, 1963, देवनागरी लिपि) ने कोंकणी-अस्मिता की सदैव रक्षा की। 'अपुरबाय' (संपादक : शान्ताराम वर्दे वालावलिकार, सोबीत साहित्य, कोंकणी भाषा मंडळ, 1965), 'कोंकणी' (संपादक : कोंकणी भाषा मंडळ, 1972), (संपादक : तुकाराम रामा शेट, 1982, देवनागरी लिपि), 'ऋतु' (संपादक : पुण्डलीक नारायण नायक, 1983, देवनागरी लिपि) ने केवल कोंकणी कविताओं की प्रसिद्धि का माध्यम उपलब्ध करा दिया। 'कोंकण टाइम्स', 'वांगडी' (संपादक : वामन नायक एवं सु.म. तडकोड, देवनागरी लिपि), 'पोट तिडक' (संपादक : अनिल कामत शंखवाळकार, देवनागरी लिपि), 'कोंकणीचें कुळार' (संपादक : आनन्द नायक, देवनागरी लिपि), 'जैत' (संपादक : भिकू बोमी नायक, देवनागरी लिपि), दैनिक 'गोंयचो आवाज' (संपादक : फादर फ्रेडी जे. दा कॉश्त, 1989, रोमन लिपि), दैनिक 'सुनापरान्त' (संपादक : चन्द्रकान्त केणी, उदय भेम्ब्रे, राजू नायक, संदेश प्रभुदेसाय, 1987) आदि पत्रिकाओं के विषय में कहा जा सकता है कि इन पत्रिकाओं ने विचारपरिप्लुत लेखन प्रसिद्ध कर कोंकणी समाज की विचारों की क्षुधा शांत की। दैनिक 'सुनापरान्त' मडगाँव से प्रकाशित होता था, किन्तु 2004 से यह गोवा की राजधानी पणजी से प्रकाशित होता है। दिलीप बोरकार 'बिम्ब' मासिक के सम्पादक हैं। श्रीमती माधवी (राजू नायक) सरदेसाय 'जाग' मासिक का कुशलता से सम्पादन कर रही हैं। ये दोनों कोंकणी की बहुआयामी पत्रिकाएँ हैं।

बाल-साहित्य

कोंकणी में बाल-साहित्य-लेखन विपुल मात्रा में हुआ है। कोंकणी जीवन में बालक-बालिकाओं का विशेष स्थान रहा है। यहाँ धार्मिक विधियों में उनका विशेष महत्त्व है। कृष्ण-राधा, नवचण्डी जैसे समारोह घरों-घरों में मनाए जाते हैं। गोवा की संस्कृति स्त्री एवं बालिकाओं के समृद्ध जीवन हेतु विशेष परिश्रम करती आई है। इसी कारण यहाँ पाठशालाओं में बालक-बालिकाओं को प्रवेश देने हेतु प्रत्येक परिवार, वह कितना भी दरिद्रता में जीवनयापन करता हो, विशेष कष्ट उठाता है। ऐसे परिवेश में बाल-साहित्य का निर्माण स्वाभाविक रूप से होता आया है। प्रकृति से प्रेम, पशु-पक्षी के प्रति उदारता का भाव, दीन-दुर्बलों की सहायता करने का प्रयत्न, क्रीड़ा में सौहार्द का नाता, उदारता की पराकाष्ठा, काव्य-निर्झर में ओत-प्रोत रहने का प्रयास जैसे विषयों से संबंधित साहित्य की रचना होती आई है। इसी कारण गोवा के बालक-बालिकाएँ सदा हंसमुख एवं सदाचार के दर्पण माने जाते हैं।

बीसवीं शताब्दी के आरंभ से कोंकणी बाल-साहित्य का निर्माण मुद्रित स्वरूप में होने लगा। पूर्ववर्ती काल में घर-घर में संत-साहित्य, पंचतंत्र, पौराणिक कहानियों की सहायता से बाल-साहित्य का मौखिक कथन होता था। बीसवीं सदी में बालक-बालिकाओं के हाथ में देने हेतु पाठ्य-पुस्तकों का निर्माण होने लगा। 1979 में कोंकणी में 'बालकवर्ष' मनाया गया। उस वर्ष 'कोंकणी' पत्रिका ने बालकों के व्यक्तित्व से संबंधित सर्व साहित्य को प्रसिद्ध किया। सर्व कोंकणी भाषा-प्रेमी, साहित्यकार, प्रकाशक, संस्थाएँ इस कार्य में जुट गईं। शासन से किसी भी प्रकार की सहायता नहीं मिलती थी। केवल 1962 में कोंकणी भाषा का पाठ्यक्रम विद्यालयों में अनिवार्य किया गया। इस दिशा में प्रथम प्रयास बारांव द कुंभारजुवा, तोमाज मौराँव ने किया था। उसी आधार को लेकर शणै गोंयबाब ने बालकों के हाथों में देने के हेतु 'भुरग्यांलो इष्ट' (1935) जैसे बाल-साहित्य की रचना की। शणै गोंयबाब लिखित यूरोपीय बालकहानियों का अनुवाद 'जादुचो जुंवो' (1968) भाषा-शैली की दृष्टि से विशेष महत्त्व रखता है। आचार्य रामचन्द्र शंकर नायक ने 'भुरग्यांलो वेद' (1948) लिखा। काशिनाथ श्रीधर नायक उपाख्य बयाभाव ने 'देखदिण्यो काणयो' (1950) का लेखन किया। रवीन्द्र केळेकार की पत्नी गोदुबाय केळेकार ने 'फुलत्यो कल्यो' कहानियों की पुस्तक लिखी। अना म्हाम्ब्रो ने 'घुमचे कट्टर घुम' (1964) की चित्रमालिका प्रसिद्ध हुई। रघुनाथ विष्णु पंडित ('गोड गोड काणयो'—दो भागों में, 1965, 'रामायण-महाभारतातल्यो कथा', 1966), कमलादेवी राव-देशपाण्डे ('काणयां-घोस', 1968-कहानियाँ, 'चिरमुल्यो', 1983 एवं 'गिजबिजलें', 1985, 'गोंयकाराच्या पडवेर' कविताएँ), सुरेश काकोडकार ('एलिस आनी ताचो अप्रूप संवसार', 1970-अनुवाद, 'गलिव्हर्स ट्रयव्हल्स'), दामोदर मावजो ('काणी एका खोमसाची', 1970), पुण्डलीक नारायण नायक ('रानसुन्दरी', 1974), महाबळेश्वर शेणवी बोरकार ('अशी काणी राजा राणी', 1975, 'सान्तानाची पिल्लूक'), लक्ष्मणराव सूर्याजीराव सरदेराय ('रामग्याली वागा भोंवडी', 1979), शान्ताराम हेदो ('बापू', 'मदलो पूत'-कवि भास के 'मध्यमव्योयोग' के कथानक पर आधारित रचना, 1979), रमेश भगवन्त वेळुस्कार ('भुंक भुंक भिशू', 'चानी मामा', 'फुलपाकुलें', 'कवनां' 1980), ओलिविन्यु जुजे फ्रान्सीस गॉमिश ('सुपुल्लो काणयां पांदुलो', 1975, 'भारत आमचो देस', 1982, 'डॉ. फ्रान्सीस लुईस गॉमिश हांची जीण', 1985), डॉ. विनायक मयेकार ('आफ्रिकेतलो शिंव', 1986) आदि रचनाएँ बालकों, कुमार विश्व में अत्यंत प्रिय रहीं। बालकथा लेखन में वर्ष 2003-04 के दौरान माया खंरगटे की 'नीलम' एवं 'शिटकू—हाकू' नामक रचनाएँ प्रकाशित हुईं।

रवीन्द्र केळेकार ने ('अशे आशिल्ले गांधीजी', 'कथा आनी काणयो') बालकों पर संस्कार करने हेतु गांधीजी के विषय से संबंधित विपुल लेखन किया। पे आल्वारु रेनातु मेन्दिस ('रुचिच्यो काणयो'), चन्द्रकान्त डॉ. विजय विट्ठल थळी ('भाटकाराचो कान'), सुशान्ता नेसरीकार ('सूरश्री केसरबाय केरकर'), पुरुषोत्तम सिंगबाळ ('बिरबल), डॉ. अरुण हेबळेकार ('आर्यभट्ट') ने बाल-जगत् को विविध विषयों का परिचय कराने का प्रयास किया। इसी विषय के अंतर्गत जिन बाल-साहित्यकारों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है, उनके नाम हैं– कृष्णनाथ अलवणी ('आमीं सगळीं देड शाणी'), गुरुदास बाम्बोळकार ('काणी एका फळराजाची'), रामदास नायक ('कावळे'), जयमाला चोडणेकार-दणायत ('सप्तक' सात नाटिकाएँ), विनय सुर्लकार ('बोधिका')।

कोंकणी बाल-साहित्य में विपुल संख्या में अनुवादित रचनाएँ भी हैं। केणी ('फुलांचो हात'–एक फ्रंच कहानी), कुमुदिनी केळेकार, संजीवनी केळेकार एवं गुरुनाथ केळेकार परिवार ने पंचतंत्र, महाभारत, अरेबियन नाइट्स, काउण्ट लिओ टाल्सटॉय, जवाहरलाल, मोतीलाल नेहरू, एनिड ब्लिटन का आधार लेकर कोंकणी में पच्चीस से अधिक स्वतंत्र रचनाएँ प्रस्तुत कीं। फेलिसियु कार्दोझ ने 'अल्लाउद्दिनाचो दिवो', 'तारवटी सिंदबाद', 'अलिबाबा आनी चाळिस चोर' की रचना की। श्याम वेरेंकार ने 'कुण्डेकुस्कूर' (1979, यह 'सिण्ड्रेला' से संबंधित रचना थी। डॉ. भिकाजी घाणेकार तो बाल-साहित्य की रचना में पूरी तरह डूब गए। उनकी 'सर्कस', 'पिकनिक', 'हावेस' जैसी रचनाओं से बाल-साहित्य समृद्ध तो हुआ ही, उनकी लोकप्रियता को चार चाँद भी लग गए। अभयकुमार वेलिंगकार ने धारावाहिक बाल-साहित्य की रचना की, जिसमें काव्य, कहानियाँ सम्मिलित हैं। विजयाबाय सरमळकार ने लोकसाहित्य का आधार लेकर ('गांठलें' 1980) कुछ रचनाएँ कीं। डॉ. तानाजी हळर्णकार ने कई बाल-नाटिकाएँ लिखीं। स्वामी सुप्रेय ने छः कहानियों तथा कविता के अनेक संग्रह प्रकाशित किए। विनय सुर्लकर का 'सात मजली हांसो' बालकों को बहुत भाया। दीपा मुरकुण्डे ने 'नुपी', 'चिमी', 'हिरन आनी वास्वेल' जैसी कहानियाँ एवं 'पिटकुली नाटकुली' जैसी नाटिकाएँ लिखी हैं। नयना आडारकार ने 'रानांतल्यो काणयो' एवं 'पिटुकल्यो काणयो' लिखीं। सुधा खरंगटे ने 'शिंव आनी कासव' कहानियाँ लिखीं। रजनी भेम्ब्रे की 'मोराची करामत' रचना सराहनीय है, जो बहुत लोकप्रिय हुई।

मनोहरराय लक्ष्मणराव सरदेसाय ने कविता, कहानियाँ, नाटिकाएँ, एकांकी, बडबडगीत जैसे विविधरंगी बाल-साहित्य की रचना की। 'बेब्यांचें काजार' (1965), 'भांगरीची कुराड', 'माणकुलीं गितां' (1982), 'मनोहर गितां' (1987), 'केलें तुकां जालें म्हाकां', 'राजकुंवर आनी चार चोर', 'अकलेचो कान्दो', 'झाँसीची राणी', 'बिराड बदलल्लें' (1981) जैसी मानक रचनाओं ने बाल-साहित्य का पथ प्रशस्त किया। गोवा कोंकणी अकादमी ने पैतींस बाल-साहित्य-विषयक पुस्तकों को पचास प्रतिशत अनुदान देकर अन्य प्रकाशकों के द्वारा प्रकाशित करवाया।

बाल नाटकों में 'कुड्याकुस्कुट' (रमेश वेळुस्कार), 'ढाम ढूम जुंव्यार' (उमेश म्हाम्बरो), 'रानमोनी आनी रानधनी' (दत्ताराम बाम्बोळकार), 'इगडी बिगडी तिगडी था' (प्रकाश पर्येकार), 'उजवाडाचे उले सान मनांतुले (पूर्णानन्द च्यारी), टींग टींग टायटिंग' (मीना काकोडकार) आदि प्रमुख हैं, जिनका बाल-साहित्य के विकास में महत्त्वपूर्ण स्थान है।

बाल-साहित्य प्रकाशित करने हेतु 'अपुरबाय' (संपादक : शान्ताराम वर्दे वालावलिकार, सोबीत

साहित्य, कोंकणी भाषा मंडल, 1965), 'नवें गोंय', 'मारुती' (संपादक : गुरुनाथ केळेकार), 'गोंयचो पर्जळ' (जुवांव इनासियु द सौझा 1982), 'भुरग्यांलो राजहंस' (संपादक : रमेश वेळुस्कार), 'बिम्ब' (संपादक : दिलीप बोरकार) जैसी बाल पत्रिकाओं ने कोंकणी बाल-साहित्य को समृद्ध करने में अग्रणी भूमिका निभाई है।

कोंकणी साहित्य की प्रमुख विधाओं के साथ-साथ अन्य विधाओं में भी रचनाएँ प्रकाशित हो रही हैं। कोंकणी भाषा मण्डल के अध्यक्ष भिकू बोमी नायक ने 2004 में 'युगपुरुष शणै गोंयबाब : एक परिचर्चा' नामक पुस्तक का संपादन किया। इस संपादित पुस्तक में शणै गोंयबाब के व्यक्तित्व एवं साहित्य के विविध आयामों पर प्रकाश डालने हेतु चन्द्रकान्त केणी, प्रियदर्शिनी तडकोडकार, मनोहरराय सरदेसाय, नागेश करमली, वृषाली मान्द्रेकार, माधवी सरदेसाय, तानाजी हळर्णकार, भूषण भावे जैसे कोंकणी विचारकों ने आलेख लिखे हैं। कोंकणी गद्य का नया रूप लेकर एन. शिवदास का 'शणै गोंयबाबच जिवीत आनी वावर', अभय वेलिंगकार का 'फॉरेन सत्री आनी मायकल स्ट्रागीफ़', सुहास दलाल का 'गुरु नानक', दामोदर मावजो का 'उंच हावेस', 'उंच माथे' एवं 'अशे घडले शणै गोंयबाब' एवं किरण बुडकुले का 'शणै गोंयबाब : व्यक्ति एवं कार्य' जैसी जीवन-चरित्रकथाएँ सामने आईं। इसके अतिरिक्त सुनन्दा नायक का 'आप उलोवणी' (आत्मकथा), सुजाता सिंगबाळ की 'काणी एके जीणेची', जयन्ती नायक की 'कलेची बनवड', दत्ता नायक की 'घटक राज्याच्यो केल्यो भोयो, आता तरी थांबतल्यो व्हय?' आदि पुस्तकें प्रकाशित हुईं, जिन्होंने कोंकणी गद्य को नया आयाम दिया। अक्टूबर 2005 में रमेश वेलुस्कार के 'घुरु घुरु वारो' और 'चू चू' नामक दो बालगीत-संग्रह प्रकाशित हुए, जिन्होंने बाल-साहित्य को नई जमीन दी।

लोकसाहित्य

कोंकणी में लोकसाहित्य-विषयक लेखन विपुल मात्रा में हुआ है। इस दृष्टि से श्रीनिवास प्रभुदेसाय की 'लोकवेद' एक महत्त्वपूर्ण पुस्तक है। जयन्ती नायक ने 'राजरत्नां', 'गाँवरान' एवं 'गोंयचे पारंपरिक खेळ' पुस्तकों का लेखन किया है।

शिक्षा

कोंकणी में शिक्षा-विषयक लेखन भी हुआ है। विशेषतः वसन्त लवन्दे का कोंकणी भाशेचें अध्यापन एवं सतीश दत्ताराम दळवी का 'गोंयच्या माणकुल्याखातीर शिक्षण'—ये दो पुस्तकें विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

साहित्य समीक्षा

कोंकणी साहित्य समीक्षा की समृद्ध परम्परा रही है। लक्ष्मणराव सरदेसाय ने 'कथाशिल्प' के द्वारा आधुनिक कोंकणी समीक्षा लेखन की नींव डाली। उन्होंने कथात्मकता का सूक्ष्म निरीक्षण किया है। डॉ. हरिश्चन्द्र नागवेंकर ने 'आस्वादन' पुस्तक में कोंकण साहित्यकारों के विविध आयाम दिग्दर्शित किए हैं। डॉ. सु.म. तडकोडकार की (आप 'सु.म. तडकोड' इस कविनाम से ललित लेखन करते आए हैं।), 'कोंकणी समीक्षण : तत्त्व आनी प्रयोग' सैद्धान्तिक तथा उपयोजित समीक्षा-कार्यों की परिचायक है। प्रो. प्रियदर्शिनी तडकोडकार ने प्रथमतः कोंकणी में 'सूचीकार्यशास्त्र' का सुविहित परिचय करवाया एवं 'पुण्डलीक नारायण नायक : साहित्यसूची (वर्णनात्मक), नामक महत्त्वपूर्ण पुस्तक लिखी। तदुपरान्त इन्होंने अपने 'कोङ्कणी

साहित्य मञ्जरी' नामक समीक्षा-लेखों के संग्रह का प्रकाशन किया। इन्होंने कोंड्कणी साहित्य मञ्जरी' में कोंकणी साहित्य एवं साहित्यिकों की आस्वादपरक समीक्षा की गई है। यह समीक्षा ग्रंथ आधुनिक कोंकणी साहित्य का विशेष परिचय कराती है। किरण बुडकुले ने समीक्षा से संबंधित 'साहित्य नियाळः अंतरंग आनी कायारूपां' एवं 'पश्चिमी समीक्षेकडेन इश्टागत' शीर्षकों से दो पुस्तक लिखी हैं।

गोवा कोंकणी अकादमी ने 'साहित्य शिल्प' प्रकाशित किया है। कोंकणी के कथाकार चन्द्रकान्त केणी ने 'साहित्य स्वाध्याय' के द्वारा मौलिक विचारों का उद्घाटन किया है। माधवी सरदेसाय ने अपने ग्रंथ में भाषाशास्त्र के दृष्टिकोण से विवेचन किया है। 'कोंकणी काव्याची पृष्ठभूमी' में चन्द्रलेखा डिसौझा ने तथा 'वालोर' द्वारा एस.डी. तेण्डुलकार ने अपनी-अपनी समीक्षा पुस्तकों में साहित्य-विषयक विचार प्रकट किए हैं। कोंकणी कविवर मनोहरराय सरदेसाय ने 'सासिहत्यसुवाद' शीर्षक से स्वयं अंपने साहित्य का आकलन प्रस्तुत किया है। इसी प्रकार भूषण भावे, अरुण हेबळेकार एवं फळदेसाय ने संयुक्त रूप से 'तीन शोध निबंध' द्वारा स्वयं के साहित्य-विषयक मतों की विवेचना प्रस्तुत की है। पुण्डलीक नायक ने 'रंगपाट' एवं प्रकाश गंगाराम थळी ने 'वियात्राचो इतिहास' लिखकर कोंकणी पाठकों को नाटक एवं तियात्र के विषय में विपुल जानकारियाँ दी हैं। गोवा कोंकणी अकादमी द्वारा चरित्रालेख (मोनोग्राफ) भी प्रकाशित किए गए हैं। प्रकाश गंगाराम थळी ने 'बा. भ. बोरकार' एवं 'लक्ष्मणराव सरदेसाय' पर तथा आन्द्रे राफायल फर्नाण्डीस ने 'रघुनाथ विष्णु पंडित' एवं 'पाय तियात्रिस्त जुआंव आगोस्तिन फर्नाण्डीस' पर मोनोग्राफ तैयार किए हैं। इसके अतिरिक्त अकादमी द्वारा आठ खण्डों में 'कोंकणी शब्दसागर' के प्रकाशन का कार्य चल रहा है। अभी तक मूर्धन्य कवि पाण्डुरंग भांगी एवं एस.एस. नाडकर्णी के संपादन में उसके तीन खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं। कविवर भांगी की व्याकरण की पुस्तक 'कोंकणी शुद्धलेखन' का प्रकाशन भी हो चुका है। मैसूर के भारतीय भाषा संस्थान के सहयोग से 'कोंकणी समान्तर कोश' (थियारस) की रचना हो रही है। गोवा कोंकणी अकादमी कोंकणी साहित्य के प्रकाशन की दिशा में स्तुत्य कार्य कर रही है।

सारांश

समकालीन कोंकणी साहित्येतिहास के अंतर्गत प्रमुख रूप से 1960 के बाद के कोंकणी साहित्य की समस्त विधाओं का आकलन प्रस्तुत किया गया है। कतिपय विधाओं की चर्चा पुर्तगीज शासनकाल से भी की गई है। वस्तुतः किसी भी युगीन समय के विविध परिदृश्यों एवं परिवेशगत हलचलों को शब्दों में बाँधना निश्चित रूप से एक दुरूह कार्य है, फिर भी यह कार्य भारतीय एवं अन्य भाषाओं के साहित्य एवं इतिहास-लेखन के द्वारा सम्पन्न किया जा रहा है। जहाँ तक समकालीन कोंकणी साहित्य के इतिहास का सवाल है, वह भी अनेक पड़ावों को पार करता हुआ प्रगति की ओर अग्रसर है। दसअसल, कोंकणी भाषा को अनेक भाषाई झंझावातों का सामना करना पड़ा है। इसलिए इसका समुचित विकास नहीं हो सका। पुर्तगीज शासन के द्वारा तो यह कुचली ही गई लेकिन इसे अपनी बड़ी बहन मराठी भाषा से भी लोहा लेना पड़ा। गोवा मुक्ति से लेकर आज तक भाषाई संघर्ष समाप्त नहीं हुआ है, फिर भी कोंकणी भाषा भारतीय भाषाओं के साहित्य के सहयोग से आगे बढ़ रही है। कोंकणी भारतीय संस्कृति का अविभाज्य अंग होने के कारण इसकी अपनी सशक्त परंपरा है। यही कारण है कि अनेक ऐतिहासिक उतार-चढ़ावों के बाद भी उसकी अस्मिता को आँच नहीं आई।

आज गोवा की कई संस्थाएँ कोंकणी भाषा, संस्कृति और साहित्य के विकास की दिशा में सराहनीय कार्य कर रही हैं, जिनका उल्लेख हम लेख के प्रारंभ में कर चुके हैं। सन् 1960 के बाद कोंकणी साहित्य की विविध विधाओं में भरपूर लेखन कार्य हो रहा है। कोंकणी भाषा और साहित्य में नए-नए रचनाकारों का उदय हो रहा है। इसके साथ ही यह भाषा मीडिया में भी अपने पाँव पसार रही है। गत वर्ष राजेन्द्र तालक के निर्देशन में बनी 'अलीशा' कोंकणी फिल्म को अन्तरराष्ट्रीय फिल्म समारोह में पुरस्कृत किया गया है। अन्य अनेक फिल्में भी बन रही हैं। गोवा नाटक एवं रंगमंच की भूमि मानी जाती है। इसे परशुराम की भूमि भी कहा जाता है। गोवा के साहित्य, कला एवं संस्कृति की अपनी विशेषताएँ है। अंत में हम इतना ही कहना चाहेंगे कि कोंकणी भाषा कोंकण प्रदेश का हृदय है तो कोंकणी साहित्य उसका शरीर एवं भारतीय आत्मा उसका परिचय।

□